इतिहास दिवाकर

त्रैमासिक अनुसंधान पत्रिका

वर्ष ११ अंक २ आषाढ़ मास कलियुगाब्द ५१२० जुलाई २०१८

मार्गदर्शक :
डॉ० शिवाजी सिंह
इरविन खन्ना
चेतराम गर्ग

सम्पादक :
डॉ. राकेश कुमार शर्मा

सह सम्पादक
डॉ. विवेक शर्मा

व्यवस्थापक
प्यार चन्द परमार

सम्पादन सहयोग :
डॉ० रमेश शर्मा
डॉ० ओम प्रकाश शर्मा

टंकण एवं सज्जा :
रवि ठाकुर

सम्पादकीय कार्यालय :
ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान,
नेरी, गांव व डाकघर - नेरी
जिला-हमीरपुर-१७७००१(हि०प्र०)
दूरभाष : ०६४१८४-८५४१५

मूल्यः
प्रति अंक - १५.०० रुपये
वार्षिक - ६०.०० रुपये

itihasdivakar@yahoo.com
chetramneri@gmail.com

अनुक्रमणिका

सम्पादकीय

संवीक्षण

पश्चिम का आर्य सिद्धान्त और आम्बेडकर का अभिमत	डॉ. कुलदीप चन्द अग्निहोत्री	३
गुरु परम्परा के प्रवर्तक महर्षि वेदव्यास	डॉ. ओम दत्त सरोच	१३

लोकाख्यान

हिमाचल की गांगे - गौरे, संधड़ियों और भर्तृहरि गाथाओं में इतिहास के प्रसंग	डॉ. वेद प्रकाश अग्नि	१६
हिमाचल के निरमण्ड-आनी क्षेत्र में महाभारत गाथाओं के ऐतिहासिक प्रसंग	दीपक शर्मा	२६
तूम्बा भजन	डॉ. राकेश कुमार शर्मा	३४

यात्रा वृत्त

तालों की नगरी नैनीताल	डॉ. दायक राम ठाकुर	३६

स्थान वृत्त

कुल्लूत गणराज्य के नीणू गांव में दवर्षि नारद की स्थापनाएं	डॉ. ओम प्रकाश शर्मा	४१

ध्येय पथ

गतिविधियां	प्यार चन्द परमार	४३

सम्पादकीय

डॉ. भीमराव अम्बेडकर की इतिहास दृष्टि

०२ अप्रैल २०१८ को कुछ राजनीतिक लोगों द्वारा भारत बन्द का आवाहन किया गया था। उस दौरान १० लोगों की जाने गई और सैंकड़ों लोग घायल हो गए, करोड़ों रुपये की सम्पति का नुकसान हुआ और आम आदमी को जो परेशानियों का सामना करना पड़ा वह अलग। कुछ लोग बाबा साहब आम्बेडकर के नाम पर अपनी विभाजनकारी नीति के तहत देश में विषमता फैलाने का काम अपनी ओछी राजनीति चमकाने के लिए कर रहे हैं। उन्हें सर्वप्रथम बाबा साहब के चिन्तन को समझने की आवश्यकता है।

बाबा साहब आम्बेडकर का जीवन भारतीय समाज को एक सूत्र में बांधने के लिए किए गए प्रयासों का अद्वितीय उदाहरण रहा है। उन्होंने कहा कि भारत की एकात्मता, यहां की सांस्कृतिक विरासत के कारण ही अक्षुण रही है, ऐसा विश्व के अन्य राष्ट्रों में दिखाई नहीं देता है। साथ ही भारतीय समाज में व्याप्त अस्पृश्यता जैसी सामाजिक बुराई के लिए उन्होंने समाज के उच्च वर्ग को दोषी माना। उन्होंने समाज का गहरा मंथन किया और भारतीय नेतृत्व को सोचने पर विवश कर दिया कि इस जातीय विषमता के खातमे से ही हिन्दू समाज का भला होने वाला है।

बाबा साहब महान इतिहासविद् थे। बाबा साहब ने कहा कि आर्य भारत के मूल निवासी हैं तथा वे कहीं बाहर से नहीं आए हैं। भारत पर अपना स्थाई आधिपत्य स्थापित करने की दृष्टि से ही यूरोप के भाषा विज्ञानियों तथा इतिहासकारों ने मिथ्या सिद्धान्त गढ़ा कि आर्य भारत में बाहर से आए हैं। यह उनकी सोची समझी चाल थी जिसका अनुसरण भारत के तथाकथित इतिहासकारों ने आंख मूद कर किया। इसका परिणाम यह हुआ कि स्वतन्त्र भारत का विद्यार्थी भी अपने सही इतिहास को पढ़ने से विंचित रहा। इस अंक में डॉ. कुलदीप चन्द अग्निहोत्री का लेख उन सब षड़यन्त्रों को उजागर करता है।

भारत का तथाकथित बुद्धिजीवी वर्ग एवं इतिहासकार अपने राष्ट्र का सही इतिहास का प्रतिपादन करने में अक्षम रहा है। उन्हें बाबा साहब आम्बेडकर के चिन्तन का आवश्यक अध्ययन करना चाहिए।

महर्षि वेद व्यास जी की जयन्ती आषाढ़ पूर्णिमा (२७ जुलाई, २०१८) भारत की प्राचीन गुरु परम्परा को समर्पित पर्व व श्रावणी पूर्णिमा (२६ अगस्त, २०१८) भारतीय संस्कृति को समर्पित पर्व ज्ञान, दर्शन, धर्म तथा संस्कृति के प्रतीक हैं। इन पर्वों की आपको शुभकामनाएं।

विनीत,

डॉ. राकेश कुमार शर्मा

पश्चिम का आर्य सिद्धान्त और आम्बेडकर का अभिमत

डॉ. कुलदीप चन्द अग्निहोत्री

पश्चिम के आर्य सिद्धान्त की चर्चा कर लेने से पूर्व यह जान लेना बेहतर होगा कि यह सिद्धान्त क्या है। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में विश्वभर के विद्वानों में यह विषय सर्वाधिक चर्चित था। मोटे तौर पर पश्चिम में जन्मे इस सिद्धान्त का निष्कर्ष था कि यूरोप और भारत के लोग मूल रूप से आर्य हैं और एक ही नस्ल के हैं। इसका कारण भाषा विज्ञान के अनुसंधान में मिले प्रमाण थे कि यूरोपीय भाषाओं और भारत की भाषाओं का मूल एक ही है। १७६७ में एक फ्रांसीसी जूसिएट पादरी Gaston-laurent Coeurdoux, जिसने अपना काफी जीवन हिन्दुस्तान में ही बिताया था, ने संस्कृत और यूरोपियन भाषाओं के बीच की समानता को पकड़ा था। उसके कुछ साल बाद ही १७८६ में सर विलियम जोन्स (१७४६-१७९४) ने भी भारत व यूरोप की भाषाओं की समानता के आधार पर प्रोटो भाषा तैयार की थी। विलियम ज़ोन्स पहले शख्स थे जिन्होंने आर्यों को एक नस्ल माना। भाषा के समान उद्‌गम के प्रमाण से उन्होंने कयास लगाया कि भारत में आर्य लोग सहस्राब्दियों पहले यूरोप से ही चलकर आए थे। इस सिद्धान्त के अनुसार अंग्रेजों ने यह स्थापित करने का प्रयास किया कि भारत में आर्य बाहर से आक्रमणकारी के रूप में आए थे, उन्होंने यहां के मूल निवासियों को पराजित कर इस देश पर कब्जा कर लिया। मूल निवासियों को दास बना लिया और उन्हें शूद्र का दर्जा दिया। द्रविड़ों को मार कर दक्षिण में धकेल दिया। सिन्धु घाटी की सभ्यता के जो अवशेष मोहनजोदड़ो व हड़प्पा इत्यादि अनेक स्थानों पर मिलते हैं, उसको भी यूरोपीय विद्वानों ने आर्यों के आक्रमण से नष्ट हुई सभ्यता के शेष बचे अवशेष बताया। सिन्ध में १९२४ में जान मार्शल ने मोहनजोदड़ो और हड़प्पा में उत्खनन् से प्राप्त सामग्री के आधार पर सिन्धु घाटी की सभ्यता को मैसीपोटामिया से भी पुरानी तो बताया था पर साथ ही वे इसमें द्रविड़ सभ्यता की कल्पना भी करने लगे थे।

उनका शिष्य मोरटिमर व्हीलर, उनसे भी दो कदम आगे निकला। १९४६ में जब वह सिन्धु घाटी में उत्खनन कर रहा था तो उसे वहां ३७ नरकंकाल मिले। उसने तुरन्त घोषणा कर दी, कि आक्रमणकारी आर्यों के हाथ पुरुष, स्त्री, बालक जो भी आया, उन्होंने गलियों में ही अत्यन्त निर्दयता से उनका कत्ल कर दिया और उन्हें वहीं मरने के लिए छोड़ दिया। अब यह कल्पना करने में कितनी देर लगती कि सिन्धु घाटी की सभ्यता के लोग द्रविड़ थे। आर्यों ने उन्हें निर्दयता से मारा था और उन्हें दक्षिण में धकेल दिया। अब तो पश्चिमी आर्य सिद्धान्त को पंख लग गए। भारत और योरोपीय भाषाओं के एक स्रोत की खोज को आधार बना कर इन पाश्चात्य विद्वानों ने सहस्राब्दियों पूर्व आर्यों के भारत पर आक्रमण की ही कल्पना कर ली और इन नरकंकालों को देख कर आर्य, सिन्धु घाटी की सभ्यता को नष्ट करने वाले बना दिए गए और द्रविड़ों को दक्षिण में धकेल दिए जाने की कहानी गढ़

ली।

इस सिद्धान्त में एक और गूढ़ निहितार्थ भी छिपा हुआ था कि भारत के जो लोग अंग्रेजों को यहां से निकल जाने के लिए कह रहे हैं वे भी उनकी तरह बाहर से ही आए हुए हैं। अन्तर केवल इतना है कि वे कुछ समय पहले भारत में आए और अंग्रेज उनके बाद आए। भारत के मूल निवासी तो दास, शूद्र, द्रविड़ व दलित इत्यादि हैं जिनके साथ आर्य लोग दुर्व्यवहार करते हैं। अंग्रेज आर्य शब्द को जाति या प्रजाति के अर्थ में प्रचलित करने का प्रयास कर रहे थे। उनके लिहाज से आर्य एक नस्ल थी। इसे आश्चर्य ही कहा जायेगा कि भारत में भी बहुत से विद्वानों ने इस सिद्धान्त को अपनाया ही नहीं बल्कि इसे आगे प्रचारित-प्रसारित करना भी शुरू कर दिया। (आज तक भी कर रहे हैं) भीम राव आम्बेडकर ने अंग्रेजों के इस सिद्धान्त को चुनौती ही नहीं दी बल्कि पुख्ता तर्कों से उनके खोखलेपन को भी सिद्ध किया। १९४६ में जब मोर्टीमर व्हीलर नरकंकालों पर सवार होकर आर्यों को हमलावर और हत्यारे सिद्ध कर रहे थे तो १९४६ में ही पश्चिमी विद्वानों के तर्कों का उत्तर देने के लिए आम्बेडकर ''शूद्र कौन थे'' नामक ग्रन्थ लिख रहे थे।

आम्बेडकर ने अंग्रेजों के आर्य सिद्धान्त को सूत्रबद्ध करते हुए लिखा कि अन्य मुद्दों पर असहमत होते हुए भी पश्चिमी विद्वान निम्न मुद्दों पर एकमत हैं –

१. वैदिक साहित्य की रचना आर्यों द्वारा की गई।
२. आर्य भारतवर्ष में बाहर से आए और उन्होंने भारत पर आक्रमण किया।
३. भारत के मूल निवासी दास और दस्यु थे और वे आर्य जाति से भिन्न थे।
४. आर्य गौर वर्ण के थे और दास-दस्यु श्याम वर्ण के थे।
५. आर्यों ने दास और दस्युओं पर विजय प्राप्त की।
६. दास और दस्युओं के पराजित होने और गुलाम बना लिए जाने पर ही वे शूद्र कहलाये।
७. शारीरिक रंग के पक्षपाती आर्यों ने चातुर्वर्ण्य व्यवस्था को जन्म देकर गोरे रंग और काले रंग वाली जातियों को सदा सर्वदा के लिए अलग कर दिया।[१]

यह सारा विवाद इसलिए शुरु हुआ क्योंकि अधिकांश यूरोपीय विद्वानों ने आर्य को एक नस्ल या प्रजाति मान लिया। लेकिन आम्बेडकर आर्य को प्रजाति या नस्ल नहीं मानते। वे मैक्सूमूलर से सहमत हैं जिनके अनुसार, ''आर्य कोई जाति या नस्ल नहीं है बल्कि एक भाषा है। इसका आशय भाषा के सिवाय कुछ नहीं। इस भाषा को बोलने वाले आर्य हैं, आर्य का अर्थ भूमि जोतने वाला है, आर्य का प्रयोग सामान्यतः वैश्य कृषक के लिए किया गया है, आर्य का प्रयोग श्रेष्ठ कुल में उत्पन्न के लिए भी होता।''[२] दुर्भाग्य से पाश्चात्य विद्वान इसी भाषा के आधार पर भारत पर आर्यों के आक्रमण का सिद्धान्त गढ़ते रहे हैं। दरअसल नस्ल या प्रजाति का ताल्लुक उसकी अलग शारीरिक रचना से होता है। आर्यों के मामले में इन चीजों का सम्बन्ध नहीं हैं। आम्बेडकर के अनुसार, ''मैं बार-बार कह चुका हूं कि आर्य शब्द का सम्बन्ध न रक्त से है और न ही शारीरिक ढांचे से न बालों से और न कपाल से। मेरा सीधा तात्पर्य है, जो आर्य भाषा बोलते हैं वही आर्य हैं।''[३] उन्होंने लिखा, ''आर्य एक जन

समुदाय का नाम है। जो चीज उन्हें आपस में बांधे हुए थी वह एक विशेष संस्कृति को, जो आर्य संस्कृति कहलाती थी, सुरक्षित रखने में उनकी दिलचस्पी थी। जो भी आर्य संस्कृति स्वीकार करता था, वह आर्य था। आर्य नाम की कोई नस्ल नहीं थी।''[४]

आर्यों के मूल को भारत से बाहर बताने के लिए अनेक यूरोपीय विद्वानों ने बहुत ऊंची उड़ानें भरी थीं। दरअसल यह सारा माजरा तब शुरू हुआ जब वैज्ञानिक अनुसंधानों से यह पता चलने लगा कि यूरोपीय भाषाओं और भारत की भाषाओं का मूल स्रोत एक ही है। इसी एक आधार पर पश्चिमी विद्वानों ने आर्यों को विदेशी मानना शुरू कर दिया। जबकि उनकी इस कल्पना के पीछे न कोई पुरातात्विक प्रमाण थे न ही ऐतिहासिक। आम्बेडकर ने बेनफे, प्रो. आईसक टेलर, गीजर इत्यादि सभी का उल्लेख किया। बेनफे भाषा के आधार पर आर्यों को भारत से बाहर तलाश कर रहे थे तो उसी आधार पर गीजर उन्हें जर्मनी का बता रहे थे। मैक्समूलर आर्यों की जड़ मध्य एशिया में जमा रहे थे। दूसरे लोग आर्यों का घर काकेशिया में तलाश रहे थे। उसका कारण सफेद रंग और भूरे बाल थे। आम्बेडकर के अनुसार भी यह सारा नाटक १८३५ में डा. बोप की किताब तुलनात्मक व्याकरण से शुरु हुआ। अपने अध्ययन के बाद बोप इस निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि यूरोप और एशिया के कुछ देशों की भाषाएं एक ही मूल की हैं। बोप का कहना था कि इसका अर्थ हुआ कि इन सभी के पूर्वज एक ही थे। यदि यूरोप में और एशिया के कुछ देशों, जिनमें भारत प्रमुख है, एक ही मूल की भाषाएं प्रचलित थी, जिन्हें इन्डो-जर्मेनिक या इन्डो-यूरोपियन भाषा कहा गया, तब प्रश्न उत्पन्न हुआ कि फिर यह भाषा भारत में कैसे पहुंची? हिन्दी में इसे भारोपीय भाषा भी कहा जाता है। इस आर्य भाषा का भारत पहुंचने का रास्ता पश्चिमी विद्वानों की दृष्टि से यही हो सकता था कि भारत में रहने वाले आर्य लोग बाहर से आए हैं। लेकिन आम्बेडकर ने इन सभी को खारिज किया।

आर्य आक्रमण के यूरोपीय सिद्धान्त को सूत्रबद्ध करने के उपरान्त आम्बेडकर पूछते हैं — ऐसा कौन सा साक्ष्य है जिससे पता चले कि आर्यों ने भारत पर आक्रमण किया और यहां के मूल निवासियों को अपने अधीन कर लिया? जहां तक ऋग्वेद का सम्बन्ध है उसमें तो रंचमात्र भी भारत पर बाहर से आक्रमण के संकेत नहीं हैं।[५] यदि आर्यों ने भारत पर आक्रमण किया और यहां के मूल निवासियों को पराजित कर दिया तो उसके संकेत वैदिक साहित्य में तो आखिर मिलने ही चाहिए थे। आम्बेडकर ने इनके लिए पी टी श्रीनिवास आयंगर को उद्धृत किया है जिसके अनुसार, ''वेद मन्त्रों में जहां-जहां आर्य, दास और दस्युओं का संदर्भ मिलता है, वह पूजा पद्धति का संघर्ष है प्रजाति का नहीं।''[६] इसके बाद आम्बेडकर ने ऋग्वेद के अनेक मन्त्र देकर सिद्ध किया है कि आर्यों और दस्युओं के बीच का अन्तर न तो प्रजातीय था और न ही शारीरिक बनावट का। दास और दस्यु भी आर्य हैं।''[७] लेकिन आम्बेडकर आश्चर्यचकित हैं कि पश्चिमी विद्वान जो अत्यन्त परिश्रमी माने जाते हैं, इस प्रकार के अवैज्ञानिक और कपोल कल्पित सिद्धान्त को कैसे ले उड़े?

परन्तु उसके बाद अगला प्रश्न पैदा होता है। यदि मान भी लिया जाए कि भारत और यूरोप में आर्य नाम की एक ही जाति है तो भारत पर आक्रमण की बात कैसे कही जा सकती है? इसकी

व्याख्या भी बाबा साहेब ने की है। पश्चिमी मानसिकता यह मान कर चलती है कि यूरोप की जातियां एशिया की जातियों से श्रेष्ठ हैं। फिर इस श्रेष्ठ आर्य जाति के भारत में भी होने का एक ही तर्क हो सकता था कि इस श्रेष्ठ यूरोपीय जाति ने हिन्दुस्तान के लोगों को जीता था और यहां अपना राज्य स्थापित किया था। यहीं से आर्यों के आक्रमण की कथा प्रचलित हुई। आम्बेडकर लिखते हैं– ''श्रेष्ठता की इस परिकल्पना को यथार्थ सिद्ध करने के लिए भी इस कहानी के गढ़ने की आवश्यकता पड़ी। अब आक्रमण की बात कहने के सिवा और कोई तरीका नहीं था। इसलिए पश्चिमी लेखकों ने यह कहानी रची कि आर्यों ने आक्रमण करके दासों और दस्युओं को पराजित किया।''[५] इसी कल्पना को सिद्धान्त का नाम दिया गया।

अब यदि आर्यों के आक्रमण के सिद्धान्त को प्रचारित करना है तो कोई न कोई इस देश के मूल निवासी भी तो ढूंढने होंगे जिन पर आर्यों ने आक्रमण किया और उन्हें पराजित किया। इसी तलाश में यह कल्पना की गई कि दास, दस्यु और द्रविड़ इस देश के मूल निवासी थे जिन्हें पराजित कर आर्यों ने शूद्र बना लिया। यूरोपीय जातियां गोरी होने के कारण एशिया के लोगों से उनके श्यामवर्ण के कारण घृणा करती हैं। अब यदि उन्होंने यह मान लिया है कि भारत के लोग आर्य हैं तो उन्हें अपनी रंगभेद की मानसिकता के लिए भारत में भी कोई आधार चाहिए था। इस आधार की तलाश में उन्होंने वर्ण व्यवस्था में रंगभेद की स्थापना की। यूरोप के आर्य सिद्धान्त में वर्ण व्यवस्था रंगभेद पर आधारित है। लेकिन आम्बेडकर के अनुसार इन परिकल्पनाओं में से कोई भी तथ्यों पर आधारित नहीं है। आम्बेडकर लिखते हैं – ''यह दावा कि आर्य बाहर से आए और भारत पर आक्रमण किया, और यह कल्पना, कि दास और दस्यु भारत के मूल निवासी थे एकदम गलत है। फिर यह कहना कि चातुर्वर्ण्य व्यवस्था आर्यों की रंगभेद की नीति पर आधारित है, यथार्थ से बहुत दूर है। यदि जातीय भेदभाव का आधार रंग ही है तो चारों वर्णों के चार रंग होने चाहिए थे जो चातुर्वर्ण्य में शामिल हैं। किसी ने नहीं बताया कि वे चार रंग कौन से हैं और ये चार जातियां कौन सी है? यह सिद्धान्त आर्य और दासों की कल्पना पर आधारित है। पहले को श्वेत और दूसरे को कृष्ण मान लिया गया है। आर्य जाति के अभ्युदय के सिद्धान्त के प्रतिपादक अपने मत की पुष्टि में इतने उत्कंठित हैं कि वे यह भी भूल बैठे कि उनकी परिकल्पना में कितनी विसंगतियां हैं। ये केवल उत्पत्ति को सिद्ध करना चाहते हैं और इसलिए उन्होंने वेदों से जो कुछ अनुकूल लगा सिद्ध साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया।''[६] आम्बेडकर मानते थे कि वर्ण का अर्थ आस्था से ताल्लुक रखता है, इसका रंग या रुप से कोई सम्बन्ध नहीं है। यह मान्यता भी तथ्यों पर आधारित नहीं है कि सभी यूरोपीय समूह गोरे रंग के ही थे और सभी आर्य भी गोरे चिट्टे ही थे। यूरोप के लोगों के अनेक समूह भी काले रंग के थे और आर्यों में भी अनेक उतने गोरे नहीं थे। देवकीनन्दन कृष्ण तो काले माने ही गए हैं। उनके आर्य होने पर तो किसी को शक नहीं है। आम्बेडकर लिखते हैं, ''आर्यों में रंग सम्बन्धी द्वेषभाव था जिससे उनकी समाज व्यवस्था निर्धारित हुई, यह बात निहायत बेसिर पैर की है। यदि कोई ऐसा जन समुदाय था जिसमें रंग सम्बन्धी द्वेषभाव का अभाव था तो वह आर्यों का समुदाय ही था। ऐसा इसलिए कि उनमें कोई ऐसा रंग प्रधान नहीं था

जिससे वे अलग पहचाने जाते।''[१०]

अंग्रेजों के आर्य सिद्धान्त का गहन अध्ययन करने के पश्चात और उनकी नीयत को जांच परख लेने के बाद उन्होंने प्रतिपादित किया – ''

१. वेदों में आर्य शब्द का जाति सूचक कोई संकेत नहीं है।

२. भारत पर आर्य प्रजाति के आक्रमण का वेदों में कोई साक्ष्य नहीं मिलता। न ही यह साक्ष्य मिलता है कि आर्यों ने भारत के आदि निवासी समझे जाने वाले दास या दस्युओं को पराजित किया।

३. कोई ऐसा प्रमाण नहीं मिलता कि आर्यों, दासों या दस्युओं के रंग में प्रजातीय भेद है।

४. वेदों से यह प्रमाणित नहीं होता की आर्यों और दास दस्युओं के रंग में कोई अन्तर है।

परन्तु एक प्रश्न फिर भी अनुतरित ही रह जाता है कि फिर शूद्र कौन हैं? आम्बेडकर इसका भी उत्तर देते हैं। उनके अनुसार शूद्र मूलतः क्षत्रिय ही हैं जो कालान्तर में उपनयन संस्कार से वंचित हो जाने से शूद्र कहलाए। लेकिन यदि शूद्र क्षत्रिय ही हैं तो फिर चातुर्वर्ण्य का सिद्धान्त कहां से आया? आम्बेडकर का मानना है कि ऋग्वेद में प्रथम तीन वर्णों का नाम ही आता है। शूद्र का उल्लेख केवल पुरुष सूक्त में मिलता है जिसके बारे में अधिकांश विद्वान सहमत है कि वह बाद की रचना है। ऋग्वेद के अनेक मन्त्रों को उद्धृत करने के बाद वह लिखते हैं, मुझे ऐसा समझने में कोई कठिनाई नहीं है कि आर्यों में केवल तीन वर्ण थे और शूद्र क्षत्रिय वर्ण से ही थे।'' शूद्रों को अनार्य बताने वाले सिद्धान्त से आम्बेडकर पहले ही असहमत हैं। उनको अनार्य बताने वालों से वे प्रतिप्रश्न करते हैं। उनके अनुसार –

१. यह कहा जाता है कि शूद्र अनार्य थे और आर्यों के विरोधी थे। आर्यों ने उन्हें पराजित किया और अपना गुलाम बना लिया। यदि यह सत्य है तो क्या कारण था कि यजुर्वेद और अथर्ववेद के सृष्टा ऋषियों ने शूद्रों का यशोगान किया? वे शूद्रों के कृपा पात्र क्यों बनना चाहते थे?

२. यह भी कहा जाता है कि शूद्रों को विद्याध्ययन और वेदाध्ययन का अधिकार नहीं था। उस स्थिति में शूद्र सुदास ने ऋग्वेद के मन्त्रों की रचना कैसे की?

३. बताया जाता है कि शूद्र यज्ञ नहीं कर सकते थे क्योंकि वे इसके पात्र नहीं थे। तब सुदास ने अश्वमेध यज्ञ कैसे किया? शतपथ ब्राह्मण में शूद्र को यज्ञकर्ता के रूप में क्यों प्रस्तुत किया गया है? इतना ही नहीं यज्ञ करने वाले शूद्र को सम्बोधित करने की विधि का वर्णन क्यों है?

४. यह कहा जाता है कि शूद्रों को उपनयन का अधिकार नहीं था। यदि शूद्रों को आदिकाल से ही यह अधिकार नहीं था तो इसके बारे में विवाद ही क्यों उठा? बदरी और संस्कार गणपति में यह उल्लेख क्यों है कि वे उपनयन के पात्र थे।

५. यह भी कहा जाता है कि शूद्र सम्पत्ति संचय करने के अधिकारी नहीं थे यदि इसे सच मान भी लिया जाए तो मैत्रायणी और काठक संहिताओं में शूद्रों को धनवान और वैभवशाली क्यों बताया गया है?

६. यह भी कहा जाता है कि शूद्र राज्य के किसी पद का अधिकारी नहीं हो सकता। यदि ऐसा था तो महाभारत में राजाओं के शूद्र मन्त्रियों का उल्लेख कैसे आता है?

७. शूद्रों का धर्म तीनों वर्णों की सेवा करना कहा गया है। यदि ऐसा था तो शूद्र राजा कैसे हुए? सायणाचार्य ने सुदास तथा अन्य अनेक शूद्र राजाओं का वर्णन कैसे किया है? [१२]

यदि आम्बेडकर के इस निष्कर्ष को सहीं भी मान लिया जाए कि आर्यों में तीन ही वर्ण थे और शूद्र क्षत्रिय ही थे तब भी, वेदों में आर्यों और दास दस्युओं में जो संघर्ष के संकेत मिलते हैं, लड़ने के संकेत मिलते हैं, उनके बारे में क्या कहा जाएगा? ऋग्वेद के ऐसे छह मन्त्रों का उल्लेख आम्बेडकर ने स्वयं किया है।[१३] इन मन्त्रों के आधार पर ही आम्बेडकर यह मानते हैं कि, ''आर्यों की ही दो जन श्रेणियां थीं जो अलग-अलग थीं और आपस में विद्वेष रखतीं थी। ....वेदों में विद्वान मानते हैं कि वेद केवल दो हैं। ऋग्वेद और अथर्ववेद। दीर्घकाल तक ब्राह्मण अथर्ववेद को भी ऋग्वेद के समान पवित्र नहीं मानते थे। ऐसा भेदभाव क्यों था? .... मैं इसका उतर यह देना चाहता हूं कि दोनों वेद आर्यों की दो भिन्न-भिन्न जातियों द्वारा रचे गए थे। कालान्तर में जब दोनों जातियां मिल कर एक हो गई तो अथर्ववेद को भी ऋग्वेद के समान पवित्र मान लिया गया।''[१४] अतः स्पष्ट है कि वैदिक साहित्य का संघर्ष आर्यों का आपसी भीतरी संघर्ष है। उसमें से एक को विदेशी और दूसरे को देशी मानने की कल्पना बौद्धिक दिवालियापन ही कहा जा सकता है। इसका कारण यूरोप की गोरी जातियों के हृदय में अपनी काल्पनिक श्रेष्ठता का अहंकार है और कुछ नहीं।

आम्बेडकर के ये प्रश्न पाश्चात्य विद्वानों के आर्य सिद्धान्त पर मुंह चिढ़ाते हैं। उनके तर्क आर्यों के बाहरी होने और भारत पर आक्रमण करने की कल्पना का पर्दाफाश करते हैं। लेकिन दुर्भाग्य से भारतीय विश्वविद्यालयों और पाठशालाओं में आज भी अंग्रेजों के उसी आर्य सिद्धान्त को पढ़ाया जाता है जिसकी आम्बेडकर ने अपने पैने तर्कों से धज्जियां उड़ा दी थीं। इसका क्या कारण हो सकता है? यह प्रश्न आम्बेडकर ने भी अपने समय में उठाया था। वे लिखते हैं, ''आर्य जाति की उत्पत्ति का सिद्धान्त एक पुरानी भ्रान्ति है। इसका अन्त बहुत पहले हो जाना चाहिए थे किन्तु इसके विपरीत इसका जनसाधारण पर प्रभाव बहुत दृढ़ हुआ है।''[१५] यह सचमुच बहुत टेढ़ा प्रश्न है। प्रायः यह संभावना व्यक्त की जाती है कि दास और दस्यु भारत के मूल निवासी थे और वे आर्यों से भिन्न जाति के थे। आर्यों ने उन्हें पराजित किया। यह सब एक काल्पनिक उड़ान मात्र है।.......... यह सिद्धान्त कुछ सुनी सुनाई बातों को अंतिम साक्ष्य मान कर निर्धारित किया गया है। अप्रमाणित आधार पर प्रतिपादित यह पाश्चात्य सिद्धान्त दीर्घकाली तक गंभीर चिन्तकों और शोधकर्ताओं की जमात में मान्य रहा, यह असाधारण है।''[१६] आर्यों के बाहर से आने और हिन्दुस्तान पर आक्रमण करने के पीछे न तो कोई वैज्ञानिक आधार है न ही कोई तथ्य। इसलिए इसका अन्त तो शुरु में ही हो जाना चाहिए था। यूरोप के विद्वान अपने स्वार्थों के लिए इस काल्पनिक आर्य सिद्धान्त को लेकर भागते रहते हैं, लेकिन भारत के विद्वानों को तो इसका खंडन करना चाहिए था। आखिर उन्होंने इसका खंडन करने की बजाए इसके समर्थन में खड़े होने का रास्ता क्यों चुना? यहां तक कि लोकमान्य तिलक ने भी

उत्तरी ध्रुवों में आर्यों की तलाश शुरु कर दी। उन्होंने १८९८ में इसे सिद्ध करने के लिए The Arctic Home in the Vedas नाम से पूरा ग्रन्थ लिख दिया। यह पुस्तक १९०३ में प्रकाशित हुई थी। वामन पांडुरंग काणे जो वैदिक साहित्य और धर्मशास्त्रों के मर्मज्ञ माने जाते हैं वे भी पश्चिमी विद्वानों के पीछे पीछे आर्यों की खोज विदेशों में करने लगे और उन्हें भारत पर आक्रमणकारी बताने लगे।

आम्बेडकर का मानना है कि भारत में आर्यों द्वारा आक्रमण के सिद्धान्त को जो इतनी ज्यादा मान्यता मिली उसका एक कारण यह है कि यहां के ब्राह्मण विद्वानों ने उसका समर्थन किया। उनके अनुसार, ''हिन्दु होने के नाते ब्राह्मणों को पाश्चात्य विद्वानों के इस मत को अमान्य करना चाहिए था कि यूरोपीय होने के कारण ही एक जाति एशियाई जाति से श्रेष्ठ बताई जा रही है। परन्तु यह आश्चर्यजनक है कि ब्राह्मण इसका तिरस्कार करने के बजाए उल्टा उसका समर्थन करते हैं। लेकिन आखिर वे ऐसा क्यों कर रहे हैं? इसका उतर भी आम्बेडकर के पास है। ''वे स्वयं को आर्यों का प्रतिनिधि मानते हैं और शेष हिन्दुओं को अनार्य जाति की सन्तान कहते हैं। इससे उनके स्वयं के श्रेष्ठतम होने के अहम की पुष्टि होती है। वे आर्यों के बाहर से आने तथा अनार्य जातियों को विजित करने के सिद्धान्त का समर्थन इसलिए करते हैं क्योंकि इससे उन्हें गैर ब्राह्मणों पर अपना वर्चस्व जमाए रखने का औचित्य सिद्ध करने में सहायता मिलती है।''[१७] आम्बेडकर ने जो अनुमान लगाया, हो सकता है उससे सभी सहमत न हों, लेकिन यह सचमुच आश्चर्यजनक है कि भारतीय विद्वानों ने पश्चिम की इन काल्पनिक बेसिर पैर की बातों पर विश्वास कैसे कर लिया।

यदि आम्बेडकर चाहते तो वे पश्चिम के इस राजनैतिक आर्य सिद्धान्त के पक्ष में खड़े हो सकते थे। इससे उनका अपना राजनैतिक हित भी सधता था। आम्बेडकर सवर्णों की जन्मजात श्रेष्ठता की अवधारणा के खिलाफ थे। दलितों के साथ सवर्णों द्वारा जो व्यवहार किया जाता था, वे उसके भोक्ता थे। सवर्ण जाति के लोग दलितों को तुच्छ क्यों मानते हैं, इसको सिद्ध करने के लिए आम्बेडकर इस सिद्धान्त का उपयोग कर सकते थे कि दलित इस देश के मूल निवासी हैं और तथाकथित सवर्ण जातियों के लोग बाहर से आए हुए हैं, इसलिए उन्होंने ऐसे शास्त्र लिख लिए जो दलितों को तुच्छ मानते हैं। आम्बेडकर के ऐसा करने पर शायद उस समय के ब्रिटिश शासक प्रसन्न भी होते। लेकिन आम्बेडकर ने एक सच्चे शोध शास्त्री के अनुसार सत्य का संधान करने को ही प्राथमिकता दी और वही कहा जो प्रमाण सिद्ध था। परन्तु उनके मन में एक टीस बची रहीं। आम्बेडकर ने जो प्रश्न उठाए थे, उनका किसी के पास तार्किक उत्तर नहीं था। उन्होंने ललकारा, ''न तो पुरातन पंथी हिन्दुओं ने ही इनका उत्तर देने का प्रयास किया है और न ही आधुनिक शोधकर्ताओं, विद्वानों का ध्यान इस ओर गया है। वास्तविकता तो यह है कि उन्हें इन गोरखधंधों के अस्तित्व का आभास तक नहीं है। पुरातनपंथी हिन्दू तो पुरुष सूक्त के इस ब्रह्मवाक्य से ही संतुष्ट हैं कि शूद्र की उत्पत्ति ईश्वर के पैरों से हुई है। अतः वह इस के बारे में उससे ज्यादा सोचता तक नहीं। आधुनिक अनुसंधानकर्ताओं ने यह मान कर संतोष कर लिया है कि शूद्र अनार्य थे, जिनके लिए पृथक विधिविधान की रचना की गई।''[१८] उन्होंने उच्च स्वर में घोषित किया, ''अतः मुझे यह कहने का पूरा

अधिकार है कि शूद्रों की उत्पत्ति एवं पतन के सम्बन्ध में मेरा मत शुद्ध, त्रुटिहीन और युक्तिसंगत है। मेरा कथन है कि इस विषय पर कोई और रचना इससे बेहतर नहीं हो सकती।''[१६]

लेकिन मुख्य प्रश्न अभी भी अनुत्तरित था। यूरोप के विद्वानों को आखिर इस सिद्धान्त की जरूरत क्यों पड़ी? यूरोपीय जातियों ने अठाहरवीं शताब्दी में धीरे-धीरे भारत पर कब्जा जमाना शुरू कर दिया था और पचास साल में भारत के एक बड़े हिस्से पर कब्जा करने में कामयाब हो गए। जाहिर है इन विदेशी आक्रमणकारियों के खिलाफ भारत के लोग संघर्ष करते। १८५७ की आजादी की लड़ाई तो सर्वविदित ही है। स्वतन्त्रता प्रयासों के उतर में अंग्रेजी शासकों ने भारतीय समाज को बांटने के प्रयास प्रारंभ किए। यूरोपीय विद्वानों का आर्य सिद्धान्त इसी रणनीति से निकला तीर है। ब्रिटिश शिक्षाविदों द्वारा आर्य आक्रमण के सिद्धान्त को स्थापित करने में उनका साम्राज्यवादी स्वार्थ भी था। उनका कहना था कि भारत में रहने वाले लोग आर्य हैं, लेकिन वे यहां के नहीं हैं बल्कि यूरोप से ही आए हैं। वे यूरोपीय जातियों के सहोदर हैं। इसलिए भारत पर ब्रिटिश राज विदेशी राज नहीं हैं। इन सिद्धान्तों से पादरियों की प्रसन्नता का तो कोई ठिकाना न रहा। उन्हें भारत में मतान्तरण का काम करना था। अतः यहां के लोगों को विश्वास में तो लेना होगा। पादरी जॉन विल्सन (१८०४-१८७५) ने खुलासा किया, ''भारत में अंग्रेजी राज एक तरह से एक ही परिवार के अरसा पहले बिछुड़े सदस्यों का पुनर्मिलन ही तो है। इस सुखद मिलने ने भारत को विश्व के सर्वाधिक प्रबुद्ध और दानी देश के सम्पर्क में ला दिया है।''[२०] कालान्तर में इसकी व्याख्या प्रसिद्ध चिन्तक और साहित्य आलोचक डॉ. रामविलास शर्मा ने भी की। शर्मा के अनुसार, ''भारत पर आर्यों ने आक्रमण नहीं किया। वेदों के रचनाकार यहीं के निवासी थे। आर्य आक्रमण के सिद्धान्त का कोई भी तथ्यात्मक आधार नहीं है। आक्रमण का सिद्धान्त भाषा विज्ञानियों के दिमाग की उपज है। पाश्चात्य विद्वानों ने उस असत्य सिद्धान्त का खूब प्रचार किया। आम्बेडकर की यह स्थापना ऐतिहासिक महत्त्व की है। वास्तव में यह साम्राज्य विरोधी स्थापना है। पन्द्रहवीं सदी के बाद यूरोप के व्यापारी और जमींदार संसार के विभिन्न भागों में फैल रहे थे। अमरीका, अफ्रीका और एशिया के देशों पर अधिकार जमाते जा रहे थे। जैसे-जैसे उनके साम्राज्य सुदृढ़ हुए, वैसे-वैसे उन्होंने अमरीकी, अफ्रीकी और एशियाई देशों की सम्पदा की लूट के साथ-साथ उनकी संस्कृति का भी अपहरण किया। ऋग्वेद के रचनाकार भारतीय नहीं थे। वे कहीं यूरोप से आकर भारत में बस गए थे, यह धारणा उनकी सांस्कृतिक अपहरण की नीति का परिणाम थी। ऐसा उन्होंने केवल वैदिक संस्कृति के साथ ही नहीं किया। उन्होंने अन्य क्षेत्रों में भी यह काम किया।''[२२] डॉ. रामविलास शर्मा ने अन्य क्षेत्रों का भी विस्तृत लेखा-जोखा दिया है। भाषाओं का मामला तो स्पष्ट था ही। भारत की आर्य भाषाएं वैदिक भाषा से निकली हैं और वैदिक भाषा भाषी लोग, उनके अनुसार खुद यूरोप से आकर भारत में बसे हैं। ''इसी तरह द्रविड़ों के लिए उन्होंने कहा कि ये बाहर से आए थे और फिनो उग्रियन परिवार की भाषाएं बोलते थे। नाग भाषा को उन्होंने चीनी तिब्बती परिवार का नाम दिया और जैसा कि नाम से ही प्रकट है, ये भाषाएं भी बाहर से भारत में आईं थीं। अब रह गया कोल या मुंडा भाषा परिवार। इसके लिए उन्होंने कहा कि ये पोलीनिशिया के द्वीप समूह की भाषाएं

हैं। इनके बोलने वाले यहां से भारत में आकर बस गए। इस तरह उन्होंने भारत के भाषाई रिक्थ से उसे वंचित कर दिया। दर्शन शास्त्र के लिए उन्होंने कहा भारत में धर्म है, देव कथाएं हैं, परन्तु यहां तर्क सम्मत, विवेकपूर्ण दर्शन का विकास हुआ ही नहीं। इस तरह भारतीय जनता को उन्होंने उसके दार्शनिक रिक्थ से वंचित कर दिया। यहां के सामाजिक संगठन के बारे में उन्होंने कहा यह ग्राम समाजों का देश है। यहां कहने लायक कोई आर्थिक विकास हुआ ही नहीं। यहां के राजा निरंकुश होते थे और प्रजा असहाय गुलामों की तरह उनकी आज्ञा का पालन करती थी। इस तरह भारतीय जन को उन्होंने उनकी राजनैतिक विरासत से वंचित कर दिया। भारत पर आर्यों के आक्रमण का सिद्धान्त इसी सांस्कृतिक अपहरण का एक अंग हैं।[२२]

आम्बेडकर अच्छी तरह जानते थे कि आर्य बाहर से आए और उनकी यहां के मूल निवासी शूद्रों से संघर्ष हुआ, यह राजनैतिक सिद्धान्त पश्चिमी साम्राज्यवादियों की कपोल कल्पना तो है ही, लेकिन यदि इसने यहां जड़ पकड़ ली तो यह अन्ततः भारत के लोगों को भीतर से बांटेगा। इससे अन्त में विदेशी साम्राज्यवादियों को ही लाभ होगा। यही कारण था उन्होंने ५ फरवरी, १९५० को संविधान सभा में सभी का आह्वान किया, '' भारत शताब्दियों बाद स्वाधीन हुआ है। अब इस स्वराज्य की रक्षा करना हमारा प्रथम कर्तव्य है। अपने समाज में किसी प्रकार की फूट पुनः हमसे स्वराज्य को छीन लेगी। शताब्दियों की गुलामी के परिणामस्वरूप हममें कुछ विकृतियां, ऊंच नीच भेद, आर्थिक विषमता, पिछड़ापन, जातिवाद आदि उत्पन्न हो सकते हैं, परन्तु इसे अपना हथियार बना कर कोई विदेशी हमारे स्वत्वों का अपहरण करना चाहेंगे तो हम उसे सहन नहीं करेंगे। हम उनकी यह आकांक्षा मिट्टी में मिला देंगे। यह हमारा घरेलू मामला है, इसलिए हम इससे आपस में ही निपटेंगे। केवल अपने लाभ के लिए या इस सामाजिक स्थिति से बाहर निकलने की इच्छा के चलते हम विदेशियों के मोहरे नहीं बनेंगे। हमें अपनों में से उत्पन्न होने वाले जयचन्दों से सावधान रहना होगा। अपने जिस राष्ट्र एवं समाज के हम अंग उपांग हैं, उसके हित को ठीक प्रकार से पहचानें।[२३] परन्तु यह और भी आश्चर्यजनक है कि आम्बेडकर का मूल्यांकन करने वाले विद्वानों ने आम्बेडकर चिन्तन के सभी पक्षों को जांचा परखा, उनकी एक-एक किताब और भाषण की समीक्षा कर दी लेकिन उन्होंने आम्बेडकर की इस देन को अनदेखा कर दिया कि उन्होंने अकेले अपने श्रमसाध्य अध्ययन से इस साम्राज्यवादी अवैज्ञानिक पश्चिमी आर्य सिद्धान्त की धज्जियां उड़ा दीं, जो कालान्तर में भारत को बांटने का काम कर सकता था। यदि आम्बेडकर का किसी एक ही कार्य के लिए मूल्यांकन भी करना पड़े तो उनका यह कार्य उन्हें देश के महापुरुषों की श्रेणी में खड़ा कर देता है।

संदर्भः

१. बाबा साहेब डॉ. आम्बेडकर सम्पूर्ण वांडमय, खंड १३, पृ. ४३

२. बाबा साहेब डॉ. आम्बेडकर सम्पूर्ण वांडमय, खंड १३, पृ. ४६ से उद्धृत

३. बाबा साहेब डॉ. आम्बेडकर सम्पूर्ण वांडमय, खंड १३, पृ. ४६

४. रामविलास शर्मा, गांधी, आम्बेडकर, लोहिया और भारतीय इतिहास की समस्याएं से उद्धृत, पृ. ४८६

५. बाबा साहेब डॉ. आम्बेडकर सम्पूर्ण वांडमय, खंड १३, पृ. ५१
६. बाबा साहेब डॉ. आम्बेडकर सम्पूर्ण वांडमय, खंड १३, पृ. ५२
७. बाबा साहेब डॉ. आम्बेडकर सम्पूर्ण वांडमय, खंड १३, पृ. ५४
८. बाबा साहेब डॉ. आम्बेडकर सम्पूर्ण वांडमय, खंड १३, पृ. ५५
९. बाबा साहेब डॉ. आम्बेडकर सम्पूर्ण वांडमय, खंड १३, पृ. ५६
१० रामविलास शर्मा, गांधी, आम्बेडकर, लोहिया और भारतीय इतिहास की समस्याएं से उद्धृत, पृ. ४८९
११. बाबा साहेब डॉ. आम्बेडकर सम्पूर्ण वांडमय, खंड १३, पृ. ६१
१२. बाबा साहेब डॉ. आम्बेडकर सम्पूर्ण वांडमय, खंड १३, पृ. १६७
१३. बाबा साहेब डॉ. आम्बेडकर सम्पूर्ण वांडमय, खंड १३, पृ. ६३
१४. बाबा साहेब डॉ. आम्बेडकर सम्पूर्ण वांडमय, खंड १३, पृ. ६४
१५. बाबा साहेब डॉ. आम्बेडकर सम्पूर्ण वांडमय, खंड १३, पृ. ५६
१६. बाबा साहेब डॉ. आम्बेडकर सम्पूर्ण वांडमय, खंड १३, पृ. ७६
१७. बाबा साहेब डॉ. आम्बेडकर सम्पूर्ण वांडमय, खंड १३, पृ. ५६
१८. बाबा साहेब डॉ. आम्बेडकर सम्पूर्ण वांडमय, खंड १३, पृ. १६८
१९. बाबा साहेब डॉ. आम्बेडकर सम्पूर्ण वांडमय, खंड १३, पृ. १६८
२०. बिल्सन को महर्षि अरविन्द ने अपने निबन्ध The Origins of Aryan Speech, (The Secret of the Veda, P. 554 में उद्धृत किया है।
२१. रामविलास शर्मा, गांधी, आम्बेडकर, लोहिया और भारतीय इतिहास की समस्याएं से उद्धृत, पृ. ५१९-५२०
२२. रामविलास शर्मा, गांधी, आम्बेडकर, लोहिया और भारतीय इतिहास की समस्याएं से उद्धृत, पृ. ५१९-५२०
२३. चन्द्रशेखर भंडारी, प्रखर राष्ट्रभक्त डॉ. भीमराव आम्बेडकर, सुरुचि प्रकाशन दिल्ली से उद्धृत, पृ. ९

पाद टिप्पणियों के लिए आम्बेडकर सम्पूर्ण वांडमय खंड १३ के २००३ संस्करण का प्रयोग किया जाता है।

कुलपति
केन्द्रीय विश्वविद्यालय
धर्मशाला - कांगड़ा (हि.प्र.)

गुरु परम्परा के प्रवर्तक महर्षि वेदव्यास

डॉ. ओम दत्त सरोच

वैदिक व पौराणिक ज्ञान परम्परा का विकास व प्रसार करने तथा गुरु-शिष्य परम्परा को समृद्ध करने में महर्षि वेद व्यास का महत्वपूर्ण योगदान है। वेद की चार संहिताओं का संकलन करके अठारह पुराणों की रचना तथा महाभारत जैसे महाकाव्य की रचना करके महर्षि व्यास ने ज्ञान के अक्षुण्ण स्रोत मानव मात्र के कल्याण के लिए प्रस्तुत किए हैं।

व्यास का प्रादुर्भाव : पौराणिक मान्यता के अनुसार प्रत्येक मनवन्तर के प्रत्येक चतुर्युग के प्रत्येक द्वापर के अन्त में वेदों के उद्धार के लिए भगवान विष्णु का व्यास के रूप में प्रादुर्भाव होता है –

''द्वापरे-द्वापरे विष्णु र्व्यासरूपी महामुने।
वेदमेंकं सुबहुधा कुरुते जगतो हितः।। वि.पु. ३-३-७

इस परम्परा के अनुसार वर्तमान वैवस्वत मन्वन्तर के अठाईसवें चतुर्युग के द्वापर युग में पराशर-पुत्र वादरायण व्यास विष्णु के अवतार के रूप में प्रकट हुए हैं। व्यास शब्द नाम का बाचक नहीं है, अपितु परम्परा का वाचक है। संस्कृत में व्यास का अर्थ विस्तार करना होता है। वेदों का चार संहिताओं के रूप में तथा शाखाओं के रूप में विस्तार करने व पुराणों आदि के रूप में ज्ञान का प्रसार व विस्तार करने के कारण ही इन का व्यास नाम प्रचलित हुआ है। इसी परम्परा के अनुसार आज भी पुराण, रामायण आदि कथाओं के प्रवचन कर्ताओं को कथा- व्यास व उनके आसन को व्यासगद्दी या व्यास आसन कहा जाता है। अतः स्पष्ट है कि व्यास व्यक्तिगत नाम न होकर ज्ञान-परम्परा का विस्तार करने वाला है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि वर्तमान चतुर्युग में महर्षि पराशर के पुत्र महर्षि वेदव्यास हुए। इनकी माता का नाम सत्यवती था, जो कि एक धीवर (मछुआरे) की कन्या थी। एक बार पराशर को वह नाव में नदी (गंगा) पार करवा रही थी तो पराशर उस पर आसक्त हो गये जिसके कारण व्यास का जन्म हुआ। इनका जन्म गंगा के एक द्वीप पर पर होने के कारण इनका नाम द्वैपायन (द्वीप पर उत्पन्न) पड़ा। इन का रंग काला (कृष्ण) था, अतः कृष्ण द्वैपायन कहलाये। द्वीप (टापू) पर बद्‌री (वेर) के पेड़ों के बीच जन्म के कारण बादरायण कहलाए तथा वेदों का संकलन करने कारण वेद व्यास कहलाए। इनका पूरा नाम कृष्ण द्वैपायन वादरायण वेद व्यास है। कानपुर (उ.प्र.) के निकट कालपी नामक स्थान पर व्यास जी का प्रादुर्भाव हुआ था। सात महापुरुष चिरंजीवी माने गए है, जिनमें महर्षि वेदव्यास जी भी एक हैं।

हिमाचल प्रदेश से व्यास जी का विशेष सम्बन्ध रहा है। मनाली के पास व्यास कुण्ड महर्षि व्यास के नाम पर है और वहां से निकलने वाली नदी व्यास के नाम से ही विख्यात है। बिलासपुर में

व्यास गुफा मौजूद है जो कि व्यास जी की तपोस्थली मानी जाती है। बिलासपुर नगर का पुराना नाम व्यासपुर व्यास जी के नाम पर ही पड़ा था। व्यास के पुत्र शुकदेव का क्षेत्र सुन्दरनगर (मण्डी) का क्षेत्र रहा है जो जिसको कि सुकेत कहा जाता है। सुकेत शब्द शुकक्षेत्र का ही अपभ्रंश है।

व्यास जी के पिता ऋषि पराशर की तपोस्थली पराशर नाम का स्थान मण्डी जिले में है, जहां पराशर झील व पराशर ऋषि का मन्दिर विद्यमान है। व्यास जी के परदादा ऋषि वसिष्ठ की तपोस्थली वसिष्ठ नाम का स्थान उन्हीं के नाम से विख्यात है जो कि मनाली के निकट है। इस प्रकार व्यास जी व उनके परिवास के सदस्यों का साक्षात् सम्बन्ध देवभूमि हिमाचल से रहा है।

व्यास का कृतित्व : महर्षि वेद व्यास ज्ञान परम्परा के वाहक हैं। द्वापर युग के अन्त में उन्होंने अनुभव किया कि मानव वुद्धि का निरन्तर ह्रास होने के कारण सम्पूर्ण वेद ज्ञान के बोध का सार्म्थय मानव का नहीं रहेगा अतः उन्होंने एक वेद के भाग करके चार वेद संहिताओं के रूप में प्रचलित किया। वेद को चार वेदों के रूप में विभक्त करने का कार्य महर्षि वेदव्यास ने किया। उन्होंने वेद के देवस्तुति परक मन्त्रों की ऋक् संहिता (ऋग्वेद) बनाया व उसका ज्ञान अपने शिष्य महर्षि पैल को दिया। यज्ञपरक मन्त्रों का संग्रह यजु संहिता (यजुर्वेद) के रूप में संकलन करके ऋषि वैशम्पायन को पढ़ाया। गेयात्मक मन्त्रों का संग्रह सामवेद का ज्ञान ऋषि जैमिनी को व विभिन्न विषयों से सम्बन्धित मन्त्र अथर्ववेद के रूप में संकलित करके महर्षि सुमन्तु को इस वेद का ज्ञान दिया। इस प्रकार व्यास के चार शिष्य चारों वेदों के प्रथम आचार्य हुए। वेदों का सम्पादन एवं संकलन करने के कारण ही महर्षि व्यास का नाम वेदव्यास पड़ा। यहीं से वेद की विभिन्न शाखाओं का विस्तार गुरु शिष्य परम्परा से हुआ तथा इस परम्परा को आरंभ करने के कारण ही व्यास को गुरु परम्परा का प्रवर्तक माना जाता है तथा उनकी जयन्ती (प्रादुर्भाव) दिवस आषाढ़ पूर्णिमा को व्यास पूर्णिमा या गुरु पूर्णिमा के पर्व के रूप में मनाया जाता है।

वेदों के सम्पादन एवं संकलन के अतिरिक्त महर्षि वेदव्यास का महत्वपूर्ण कार्य महाभारत की रचना है। त्रिकालदर्शी महर्षि वेदव्यास महाभारत की घटनाओं के प्रत्यक्षदर्शी रहे हैं विचित्र वीर्य व चिगाङ्गद की संतान न होने पर व्यास के दृष्टिपात से ही उनकी पत्नियों को संतान के रूप में धृतराष्ट्र व पाण्डु के रूप में पुत्र प्राप्त हुए थे। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि कौरव पाण्डव वंश की परम्परा को आगे बढ़ाने में महर्षि वेद व्यास का ही योगदान है। महर्षि वेदव्यास ने समय-समय पर हस्तिनापुर में पधार कर कौरवों व पाण्डवों को उपदेश दिया व विकट स्थितियों में उनका मार्गदर्शन किया। महाभारत, महाकाव्य महर्षि वेद व्यास की अनुपम कृति है। भारत वर्ष के प्राचीन इतिहास, धर्म, संस्कृति का दर्शन महाभारत में संकलित है। महाभारत को लिपिबद्ध करने के लिए वेद व्यास जी ने गणेश जी से अनुरोध किया। गणेश जी ने शर्त रखी कि व्यास जी बिना रुके निरन्तर बोलते जायेंगे तभी से उनके शब्दों को लिपिबद्ध करेंगे। व्यास जी ने यह शर्त स्वीकार कर ली। तब व्यास जी निरन्तर महाभारत के श्लोकों को बोलते जा रहे थे और गणेश जी लिखते जा रहे है। इस प्रकार एक लाख

श्लोकों के महाकाव्य महाभारत की रचना हुई। महाभारत की रचना का स्थान बदरीनाथ का क्षेत्र है। बदरीधाम से तीन किलोमीटर दूर ''माना'' नामक स्थान पर सरस्वती एवं मन्दाकिनी नदी के तट पर व्यास गुफा मौजूद है। व्यास गुफा के ठीक सामने गणेश गुफा है। व्यास जी अपनी गुफा/स्थल से बोलते जा रहे थे और गणेश जी अपनी गुफा में बैठकर उसे लिपिबद्ध करते जा रहे थे। व्यास गुफा के निकट वह रही सरस्वती नदी के शोर के कारण गणेश को व्यास की बात ठीक से सुनाई नहीं दे रही थी तो व्यास जी ने सरस्वती नदी को लुप्त होने का आदेश दिया। व्यास जी के आदेश से सरस्वती वहीं लुप्त हो गई। यह दृश्य आज भी माना गांव में देखा जा सकता है। सरस्वती नदी का उद्‌गम वहीं है और वहीं कुछ ही दूरी पर वह लुप्त हो गई है। व्यास गुफा के ऊपर एक बहुत बड़ी चट्टान है। जिसे व्यास पोथी कहा जाता है। उस चट्टान में पुस्तक के पन्नों की तरह परतें दिखाई देती है। इसी कारण से इसे व्यास पोथी कहा जाता है। ऐसा माना जाता है कि व्यास द्वारा रचा गया साहित्य ही उस चट्टान रूपी पोथी के रूप में विद्यमान है।

इसके अतिरिक्त अठारह महापुराण भी व्यास की रचना माने जाते हैं। सर्ग (सृष्टि रचना) प्रतिसर्ग (प्रलय) वंश, मन्वन्तर (काल गणनादि) तथा विभिन्न राजवंशों व ऋषि कुलों के विस्तार से सम्बन्धित मान्यताओं, कथाओं, सिद्धान्तों विचारों का संकलन करके महार्षि वेद व्यास ने पुराणों की रचना की तथा पुराण संहिता विस्तार अठारह पुराणों के रूप में किया। भारतीय ज्ञान-परम्परा का बहुत बड़ा स्रोत यही वेदव्यास रचित विशाल पुराण साहित्य है।

वेद की शाखाओं व गुरु शिष्य परम्परा का सूत्रपात भी व्यास जी द्वारा किया गया है। इसीलिए आषाढ़ पूर्णिमा उनका प्रादुर्भाव दिवस गुरु पूर्णिमा पर्व के रूप में मनाया जाता है तथा यह दिन गुरु के प्रति श्रद्धावनत होने का पर्व है।

प्राचार्य, संस्कृत महाविद्यालय
चकमोह, जिला हमीरपुर (हि.प्र.)

हिमाचल की गांगे-गौरे, संधड़ियां और भर्तृहरि गाथाओं में इतिहास के प्रसंग

डॉ. वेद प्रकाश अग्नि

विश्व ब्रह्माण्ड की समग्र विचार चेतना और समूचे क्रियाकलाप का उद्‌गम स्थल, पोषक व संहारक स्रोत 'गायत्र' है। घनीभूत आत्यन्तिक स्पंदनशील समष्टि चैतन्य ही गायत्र है। वस्तुतः मूल सघन समष्टि चैतन्य तत्त्व ही आद्यन्तहीन ऐसा तत्त्व है जो स्वतः निस्पृह पर समग्र का संवाहक और जनक है। सब शास्त्रों की चैतन्यता एक मात्र आधार है। इसी गायत्र चैतन्य की वाहक गायत्री भगवती वेद जननी है। उससे अभिन्न हुए जीना ही सच्ची गायत्री उपासना है और वेदादि शास्त्रों के हृदय में प्रवेश पाने की कुंजी है।

जिन स्वनाम धन्य क्षात्रतेज सम्पन्न महामानवों को इस गायत्र चैतन्य का राजसिक बोध हुआ उन्होंने इतिहास रचा और दूसरी ओर जिन्होंने इसी गायत्र चैतन्य का साक्षात्कार कर आत्मस्वरूप को परखा, पहचाना, उसकी अक्षय अनन्त शक्तियों के द्वार उन्मुक्त किए तथा उसका प्रसादी युग-युग की भूली-भटकी मानवता को अन्धेरे से प्रकाश में लाने का प्रयत्न किया। सच्चे जीवन का रास्ता दिखाया साथ ही शाश्वत दुःखालय संसार की विभीषिकाओं और पीड़ाओं के संत्राश से बचाने का भागीरथ प्रयत्न किया, उन्हीं से यह गायत्र प्राण लोकगाथाओं के रूप में लोकहृदय का कंठहार हो गए।

भरमौर क्षेत्र में प्रचलित गांगे-गौरे की गाथा गायन का प्रचलन है। कुछ कर्मकाण्डी इसे नवाला-उत्सव पर भी गाते हैं। विश्वास किया जाता है कि उचित समय (ठीक महूर्त) में इसके पारायण से सुभिक्ष रहता है तथा जल का अभाव नहीं होता। कहना व्यर्थ है जिन क्षेत्रों के मंदिरों में पूर्णमासी व एकादशी को नियमित श्रद्धापूर्वक गंगा सहस्रनाम का वाचन होता है वहां के क्षेत्र में अनुकूल वर्षा होती रहती है। दक्ष प्रजापति घर जन्मी गांगे और गौरी विवाह योग्य हुई तो उन्होंने पिता दक्ष प्रजापति से दहेज में बर्फ की वर्षा मांगी। यहां यह लक्ष्य करने की बात है कि गौरी मूल प्रकृति की वह सृजनात्मक प्रारंभिक अवस्था है जिसमें सृष्टि का तेजस-सक्रिय बीज ब्रह्मतेज या आदिवाक् रुद्रया अग्नि एक भाग से रुपान्तरित होकर पोषिणी जलीय अमृत बूंदों में रूपायित होकर ब्रह्मतेज रूपी बीज को सृष्टि के नाना घटक के रूप में रूपायित करता है। इसी को वैष्णवों ने यों कहा है कि भगवान् नारायण या कृष्ण में घनीभूत 'सत्वा' परावाक् जब प्रवर्षणशील होने की प्रथम अवस्था में प्रवाहित होता है करुणा के रूप में प्रथम अश्रुबूंद रूप में तो वही मूला प्रकृति राधा रानी होकर अनंत कोटि ब्रह्माण्ड का सृर्जन और पोषण करने लगता है। इसे ही ऋग्वेद १।१६४।४१ में ''गौरी मिमाय'' सलिलानि तक्षती कहकर पुकारा गया है। तक्षण, तराशना तथा गढ़ना आदि विश्वकर्मा के संदर्भ में आता है। फिर शतपथ ब्राह्मण और गोपथ ब्राह्मण में कहा गया है ''या वाक् सो अग्नि'' (२.४.११) अतः सलिल गौरी मूलवाक् या नाद ब्रह्म

की ऐसी अवस्था है जो महेश्वर के आदेश या संकल्प से सृष्टि के दायित्व को पूर्ण करने आवेगा और कुल प्राण-प्रवाह बनकर जिसमें सृष्टि के समस्त सृजनशील गुणात्मक उपादान अपनी परिपूर्ण क्षमता में विद्यमान है। सृष्टि करने तो गौरी चली हैं – पर शिववियोग सह्य नहीं है। अतः बर्फ का सघन रूप में दहेज मांगती है ताकि शिव का सहयोग बना रहे, कैलाशवास भी बना रहे। ध्यान सघन हिम में अग्नि या शिव तत्त्व विद्यमान होता है और हिम कैलाश पर ही सहस्रार कमल में ही अनभय है। अतः इस गाथा में वैदिक सनातन परंपरा के सांस्कृतिक चैतन्य की परम्परा को संजोकर लोकहृदय में उंढेला गया है। गाथा के अन्य अनुषंग स्थानीय सामाजिक मूल्यों के रूपान्तर की मलयावातास को बिखेरते हैं।

शाक्तदर्शन की विविधता को समग्रता के साथ लोकमानस में गहरे बिठाने का प्रयास संधिड़ियों की गीतात्मक गायकी द्वारा हुआ है। इसका संबन्ध शक्ति पीठ ज्वालाजी से जुड़ा हुआ है।

कहना न होगा कि श्री ज्वालामुखी का महाशक्ति पीठ चार महाशक्ति पीठों में से जालन्धर शक्तिपीठ का महत्त्वपूर्ण शाक्त तीर्थ है। संधिड़ियों की गायकी सांगोंपांग शाक्तदर्शन का विवरण प्रस्तुत करती है। इसे लेखक ने बचपन में अपनी दादी मां स्वर्गीय मनशा देवी के श्रीमुख से सुना था। होश आने पर कुछ नोट भी किया। किन्तु अधिकांश का बोध उस समय था नहीं। अतः इस बहुमूल्य धरोहर का जितना भाग स्मृति पटल पर था प्रस्तुत किया जा रहा है। प्रारंभ में ही शाक्त दर्शन की गुरु गंभीरता को लक्ष्य करते हुए कहा गया है –

इसदा भेद, कुन्नी नी पाया जी।
इसदा भेद, तिन्नी ही पाया जी।
जिस पर गुरु जी दी छाया जी।
यूंई कालां दी संधिड़िये
तूं किंयां करि,
साढ़े आई जी।।
... साढ़ें घरें आई जी
बारहां थाई मैं भटकी ऊटकी।
तुस्सां दे कुले आई जी।
तां फिरी संधिडी होई जी।

इस प्रकार इन पंक्तियों में कुलजा या कुलदेवी के महत्त्व उसकी उपयोगिता का वर्णन किया गया। कुलजा विहीन जीव नाना योनियों में भटकता फिरता है। उसे अपने लक्ष्य और कार्य क्षेत्र का बोध नहीं होता। संसार की सफलता, मान प्रतिष्ठा, वंशविस्तार सुख-समृद्धि आदि कुलजा या कुलदेवी की प्रसन्नता पर निर्भर है। सांसारिक ऐश्वर्य कुलदेवी रूप में मां दुर्गा ही प्रदान करती है। क्या कुछ प्रदान करती है इसका गुप्त संकेत इस तरह किया गया है –

मते रंग तेरे, संधिड़िये
तूं कुन्हां कुन्हां रंगा जो ल्याई जी।
सब रंग पिरोया संधिया
तुसां कुण कुण रंग दी कमाई जी।

सुआ रंग, करनी कमाई जी
कि चिट्टे रंग मन लगा तुंस्सां दा
काला रंग गिया भाई जी
कि पीले रंग मुग्ध कीता।
दया सच्चो सच्च गलाई जी।।
सब रंग संधिड़ियादे काया अन्दर
भेत गुरु दिन्दा बताई जी।।

इस तरह इन पंक्तियों में राज्य ऐश्वर्य लाल रंग द्वारा, चिट्टे रंग द्वारा ज्ञान ऐश्वर्य, काले रंग द्वारा महाकाली के अधिकार क्षेत्र में पड़ने वाले शत्रु पर विजय, बाग बगीचे और धनधान्य तथा नौकर चाकर के पीत संग द्वारा लक्ष्मी, सोना-चांदी के ऐश्वर्य व अधिकार का आश्वन दिया गया है जो गुरु मार्ग से कुलदेवी ज्वालाजी की अराधना और सेवा करता है।

इस तरह संधिड़ियों की गायकी द्वारा शास्त्र दर्शन के कुछ गूढ़ रहस्यों का वर्णन हुआ है। बताया गया है सिद्ध श्रेणी महापुरुष शक्ति पुत्र हैं, पार्वती के बेटे हैं। ये ही महामाया के आदेश संकेत पर संसार का शासन चलाते हैं। इनमें से कुछ सिद्धों को फसलों का अधिकार, कुछ जल और वायु, फलों आदि निराम जीवों के पाप-पुण्य के आधार पर भगवती के आदेश परामर्श से ये उन-उन क्षेत्रों में वृद्धि या ह्रास को सरजाम देते हैं। इस प्रकार कुछ सिद्ध उपरिष्ट को शान्त करते हैं कुछ भक्ति और सत्कर्म के क्षेत्र को उजागर करते हैं। साधना क्षेत्र की कुछ अन्य बातों का उल्लेख निषिद्ध होने के कारण संधिड़ियों का इतना परिचय देना पर्याप्त होगा। इससे इसके सांस्कृतिक और दैवीय सृष्टि से जुड़े पहलू का महत्त्व अपनी भास्वर झलक देता है।

त्रिगर्त क्षेत्र में प्रचलित समुद्रां रानी की लोककथा जहां शाक्त साधना की सर्वोत्तम उपलब्धि की द्योतक है वहां यह भारतीय सांस्कृतिक इतिहास की उन भूली-बिसरी कड़ियों को भी उजागर करती हैं जिन्होंने सांस्कृतिक चेतना के युग बोध को कथात्मक घटनाओं के माध्यम से न केवल जीवित रखा है बल्कि एक सारगर्भित युग साक्ष्य भी प्रस्तुत किया है। संक्षेप में कथा इस प्रकार है।

एक धनवान सौदागर है। उसके चार बेटे हैं। सौदागर मर चुका है। चार बेटों में से तीन विवाहित हैं, चौथा कंवारा है। एक दिन महान पर्व उत्सव पर तीन भाई, भाभीयां और माता जी नहा धोकर सुन्दर-सुन्दर वस्त्र और आभूषण धारण कर तैयार हो गए तो सबसे छोटे बेटे को उसकी बड़ी भाभी नहलाने लगी। पीठ पर जमी हुई मैल को उसने लस्सी मल धोकर मैल उतारने के लिए कुछ ज्यादा से रगड़ दिया। इस पर छोटे देवर ने भाभी के हाथ खुरदुरे होने का गिला किया। जिसका बड़ी भाभी बुरा मान गई और उसने ताना देते हुए देवर को कहा कि समुद्रा रानी के हाथ ही मखमल के समान कोमल है, रेशम और चंदन से सुगंधित। उसे ब्याह लाने की करतूत करो तो मुलायम हाथों से पीठ सहलाने की चाह पूरी हो सकती है। ये तीखे शब्द सौदागार के चौथे बेटे को मन में तीर की तरह गड़ गए। उसने समुद्रां रानी को ब्याहने की ठान ली और दो घोड़ों पर रसदपानी लादकर घर से निकल पड़ा।

कुछ दिन की यात्रा बाद वह सांयकाल के समय एक ऐसे राज्य के नगर के बाजार में पहुंचा जहां बाजार बन्द था। सिवाए एक अन्धे आदमी के सिवा और कोई नहीं दिख रहा था। उससे पूछने पर पता चला कि राजा ने नगरवासियों को अत्यन्त पीड़ित करने वाले डाकू को स्वयं पकड़ लिया है और आज उसको सब प्रजाजनों के सामने फांसी पर चढ़ाया जाएगा। सौदागर का बेटा घोड़ों की बागें अन्धे को थमाकर स्वयं फांसी स्थल पहुंचा। सौभाग्यवश नगर का राजा शाहूकार का मित्र व स्नेही ही नहीं था अपितु जरूरत पड़ने पर उससे ऋण भी लेता था। इस तरह उनमें बड़ी प्रगाढ़ मैत्री थी। अपने स्नेही सौदागर का बेटा जानकर उसका आदर किया। फांसी के तख्ते पर लटकाए जाने वाले डाकू की दीन दशा को देखकर सौदागर के बेटे को दया आ गई। उसने राजा से डाकू को छोड़ देने की प्रार्थना की जिसे राजा ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। प्रजा के रोष के बाबजूद राजा ने मित्र-पुत्र का वचन निभाया।

रात नगर में बिताकर दूसरे दिन दोनों घोड़ों को साथ लेकर सौदागर का बेटा समुद्रां रानी को प्राप्त करने के लिए अपने पथ पर आगे बढ़ा। वह दो योजन यात्रा कर चुका था और विश्राम करने के लिए एक बरगद के टियाले पर रुका हुआ था तो उसने देखा कि वही डाकू हाथ में बन्दूक संभाले उसकी तरफ भागता हुआ आ रहा है। उसे आते देख वह सहम सा गया। पर जब पास आकर उसने सजल नेत्रों से कृतज्ञता पूर्ण दण्डवत प्रणाम किया, बिलंब के लिए क्षमा याचना की तो मित्रता होते देर न लगी।

डाकू ने सौदागर के बेटे को कहा कि सात समुन्द्र पार रहने वाली समुंद्रा रानी को पाने का वह ख्याल छोड़ दे। यह जोखिम उसका कोमल शरीर नहीं उठा सकता। परन्तु जब सौदागर का बेटा अपने निश्चय पर अटल रहा तो डाकू मित्र ने उसे हर कदम पर सहायता करने का प्रण दोहराया।

समुद्रां रानी वहां से बहुत दूर सात समुद्र पार कर उसके मध्य टापू में राक्षस से सुरक्षित महल में रहती थी। राक्षस जब भी कभी बाहर जाता तो उसे सोने की डिब्बिया में मक्खी बनाकर ताला लगाकर उसे कैद करके ही जाता था। इस तरह समुद्रां रानी की प्राप्ति बच्चों का खेल न था।

इरादे के पक्के और लक्ष्य की प्रति अडिग दोनों अपने गन्तव्य की ओर बढ़े जा रहे थे कि एक रात जब वे वटवृक्ष के टियाले पर रात विश्राम करने को रुके थे। वृक्ष पर तोता-मैना बातचीत कर रहे थे। मैंना को नींद नहीं आ रही थी। उसने तोता से कोई नयी बात सुनाने को कहा तो तोता ने बताया कि सौदागर का बेटा असंभव काम करने जा रहा है। समुद्रां रानी के रक्षक राक्षस को उनके आने का भान हो गया है। इसलिए वह सौदागर के बेटे को मारने लिए एक बार सर्प का रूप धारण कर उसे डसेगा और एक बार आंधी तूफान बनकर इसे उड़ा ले जाकर इसकी जीवन लीला समाप्त कर देगा। मैना ने इनसे बचने का उपाय पूछा तो तोते ने कहा कि आंधी तूफान आने पर कोई बन्दूक का फायर कर दे व सांप के जहर फैंकने पर सौदागर के बेटे के होंठों से जहर चूसकर थूक दे तो हर तरह से रक्षा होगी। फलतः ऐसा होने पर डाकू ने तुरन्त प्रतिकार कर सौदागर सुत के प्राण बचा लिए। राक्षस को विफल मनोरथ लौटना पड़ा।

इसके बाद दोनों सात समुद्र के तट पर पहुंच गये। छः महीने की समुद्री यात्रा की तैयारी करने लगे। सूखी लकड़ियों का मीलों तक ऊंचा दिखाई देने वाला ढेर लगा। बांस की मजबूत नौका तैयार कर और सौदागर सुत को समुद्र तट पर प्रतीक्षा करने के लिए ठहराकर डाकू छः महीने की विकट और जोखिम भरी समुद्र यात्रा पर निकल पड़ा और कह गया कि लकड़ी को आग लगा देना ताकि लौटते समय इसी तट पर समुद्रां रानी को लेकर लौट सकूं। छः महीने की कठिन तपस्या से सात समुद्र पार कर वह मध्यवर्ती टापू में, राक्षस की अनुपस्थिति में सोने की डिबिया में मक्खी बनाकर रखी हुई समुद्रां रानी को वापस समुद्र तट पर ले आया और सौदागर के बेटे को कहा कि इस डिबिया में समुद्रां रानी है। इस डिबियां को यहां पच्चीस योजन निकल जाने पर खोलने से सुरक्षित समुद्रां रानी से भेंट हो जाएगी। किन्तु अत्यन्त उत्सुकता वश सौदागर सुत ने ज्यों ही डिबिया खोली, समुद्रां वापस लौट गई। डाकू पुनः वही प्रक्रिया दोहराकर समुद्रां रानी को वापिस लाया और अब नियमों का पूरा पालन किया गया तो निर्विघन डाकु और समुद्रां रानी सहित सौदागर का बेटा घर लौटे और खुशी-खुशी घर रहने लगे।

कुछ समय बाद उसी घर पर उत्तरा जोगी भिक्षा के लिए आया। डाकू ने भिक्षा देने के लिए मना कर दिया। वह उसकी नियत भांप गया था। इस पर उसने जादू से डाकू को कमांद के खेत के पास पत्थर बनाकर फैंक दिया और समुद्रां रानी से बरबस भीख मांग कर उसे बकरी बनाकर अपने साथ ले गया। इसके बाद सौदागर का परिवार हर तरह बेहाल और परेशान हो गया। इस बीच सौदागर के पुत्रों का एक बेटा स्कूल लौटते हुए गन्ने के खेत से गन्ने तोड़ कर गन्ना छीलते जब उसकी उंगली से खून निकला तो उसमें वह खून उस पत्थर से पौंछा तो वास्तव में उतरी जोगी के अभिचार से पत्थर हुआ डाकू था। वह राम-राम कहकर उठ खड़ा हुआ। लड़का यह देखकर भागने लगा। उसे समझा बुझा कर वह उसके घर आया तब सारे हालात उसको पता चला तो उसने उत्तरी जोगी को सबक सिखाने की सोची। इस पर परिवार ने आग्रह पूर्वक मना किया कि वही एक मात्र उनके परिवारिक मित्र और सहारा है, जोगी बहुत खराब है, उससे लड़ना खतरे का काम है। वह कूटनीति पूर्ण जोगी की मृत्यु के रहस्य को बकरी बनी समुद्रां रानी के माध्यम प्राप्त कर, दूर मलय प्रदेश में चन्दनपुर की चोटी पर एक पेड़ पर लटके पिंजरे में रह रहे तोते में उसके प्राण है। इस वृक्ष की रक्षा बड़े जहरीले सांप कर रहे है जिनका जहरीला फुंकार एक योजन तक पास आने वाली हर चीज को जला कर राख कर देता है। डाकू ने गरूड़ की सहायता से उस पिंजरे को प्राप्त कर तोते को काबू कर उतरी जोगी से सौदागर के सभी परिवार व मित्रों को जीवित करवा कर उत्तरी जोगी के हाथ, पैर टांगे और अन्त में तोते की गर्दन मरोड़कर उसे मार डाला। इस तरह सौदागर पुत्र प्रसन्नता पूर्वक समुद्रां रानी के साथ रहने लगा।

यह कथा भारतीय संस्कृति की उस युग संधि की चेतना को रेखांकित करती है जब तक ओर आर्य अष्टाङ्ग मार्ग के प्रणेता महात्मा बुद्ध द्वारा सनातन वैदिक संस्कृति के योगी-यति धर्म के सारस्वत मूल्यों की गिरावट के कारण जहां मन्त्रयाना सहज यानी सिद्धों द्वारा सांस्कृतिक मूल्यों को ध्वस्त कर

सामाजिक ढांचे को विकृत किया जा रहा और टोने-टोटकों द्वारा सामाजिक घटक को और भी कलहपूर्ण तथा अन्ध विश्वासी बनाया जा रहा था। उस समय सच्चे वैदिक सनातन धर्म को नाद ब्रह्म के आमाद स्पन्दनशील महात्रिपुरी सुंदरी को उपासना के स्थापन द्वारा गोविन्दाचार्य, गोड़ा पादाचार्य और शंकराचार्य की प्रस्थानत्रयी भारतीय समाज, साधना और संस्कृति को नये सिरे से वैदिक-सनातन मूल्यों से परिचित कराकर जीवन साधना का अंग बना रही थी। उस समय बौद्ध सिद्धों की विकृत सांस्कृतिक कुचेष्टाएं व अभिचार मूलक साधनाएं समाज को धर्मभ्रष्ट कर रही थी। तभी शंकराचार्य ने भारतीय संस्कृति की जीवन्तता को पुनः जीवित करने का प्रयत्न किया। फिर भी विकृतियां रह गई थीं। वह एक या दूसरे नाम की आड़ में अपना काम कर रही थीं। उनसे लोहा लेने के लिए भारतीय संस्कृति मंच पर गुरु मत्स्येन्द्र नाथ और गोरखनाथ का उदय हुआ। उन्होंने इतिहास की भूलों, सांस्कृतिक विकृतियों और सामाजिक दुर्बलताओं से देश के एक कोने से दूसरे को परिचित कराते हुए न केवल जगाया, चौकन्ना किया बल्कि अपने उपदिष्ट शिष्यों द्वारा भारतीय जनजीवन को पुनः प्राणवान बनाने का प्रयत्न किया। इस दिशा में राजा भर्तृहरि और मारवाड़ केसरी गूगा पीर उल्लेखनीय हैं जिन्होंने शस्त्र और शास्त्र के क्षेत्र में तो अभूतपूर्व क्रान्ति को जन्म दिया अपितु लोक हिताय भी एक से एक बढ़कर काम किया। फलस्वरूप उनकी गाथाएं लोक कण्ठहार बन गई।

यहां पर यह और ध्यान रखने की बात है कि जिस कुंडिलिनी शक्ति को सप्तचक्र भेदन कर ब्रह्मरन्ध्र के सहस्रार में सदा शिव से जोड़कर योगी कृत्यकृत हो जाता है उसका स्पष्ट कथात्मक निरूपण है। यात्रा मार्ग की कठिनाई साधना मार्ग की वज्र परीक्षा है जिसे पारकर ही साधक महामाया के कृपा प्रसाद का पात्र बनता है। पर छदम योगी क्षुद्र सिद्धियों और चमत्कारों में उलझकर उतर योगी की भान्ति लक्ष्य से भ्रष्ट होते हैं और समाज को भी पतन के गढ़े में धकेलते हैं। यह स्थिति भारतीय समाज के इतिहास की दृष्टि से विशेष विचारणीय है।

अजबा नगर के राजा विधिचन्द निस्संतान थे। संतान प्राप्ति हेतु उन्होंने ६८ अशरफियां देकर सिपाही कश्मीर के ६८ पंडितों के पास भेजे। उन्होंने अपने ६८ विद्याग्रन्थों के अध्ययन पर से यह निर्णय दिया कि पितृदोष के कारण राजा के भाग्य में संतान नहीं है। परन्तु राजरानी के भाग्य में उपाय साध्य पुत्र संतिति है। फलतः भर्तृहरि का जन्म हुआ। बताया गया कि यह राजगद्दी से पराङ्मुख होकर योगी हो जाएगा। उसकी बारहवीं रेखा के परिणाम स्वरूप वह बारहवें वर्ष में साधु हो जाएगा। प्रलोभन देने पर भी पंडितों ने भाग्य रेखा बदलने में असमर्थता प्रकट की।

समय आने पर राजा भर्तृहरि लाखी जंगल में धूनी रमाने चला गया। उसे न तो गद्दी का आकर्षण हुआ, न बूढ़ी मां की ममता बान्ध पाई व न ही चौदह सौ रानियों का प्रेम बन्धन। गुरु से प्रार्थना कर उन्होंने योगी का बाणा ग्रहण कर लिया। गुरु के चरणों में राज मुकुट उतारकर रख दिया। सिर मुंडा दिया, कान चिरवाकर स्फटिक की मुद्राएं डलवा लीं। गले में ठुमरे की माला पहन ली।

राज माता के ऐश्वर्यमय जीवन जीने के सारे प्रलोभन भर्तृहरि को अपने ध्येय पथ से

विचलित न कर सके। राजा ने सुन्दर आरी लेकर राज वाटिका से चंदन की लकड़ी काटकर उससे पश्चिम देश के बढ़ई के बेटे से सुन्दर और सर्वागीण किंगरी बनवाई जिस पर अजबा नगरी सहित सूरज, चांद पांडवों आदि सहित उसे बह्माण्ड की वाकश्रीकार प्रतिनिधित्व चित्रासन रूप में किया गया। बढ़ेई को मजदूरी के रूप में सोने के कड़ों की जोड़ी दी।

भर्तृहरि ने माता और राजगद्दी को प्रणाम किया। चिमटा और तुम्बड़ी हाथ में लेकर महल से निकल गया। पीछे मुड़कर देखा तो मन भर आया। पर ममत्व पर विजय प्राप्त कर वह मानसरोवर झील पर पहुंच गए। वहां उसने धूनी जगाकर आसन की उचित व्यवस्था की तो ध्यान के स्थान पर भूख ने सताया, बूढ़ी मां की सीख याद आई, सिंगापुर की रानी की मोतियों की माला का ख्याल आया फिर वह किंगरी लेकर मानसरोवर के शान्त वातावरण में बजाना शुरू किया तो नादब्रह्म की उस लयतान में सारा कैलाश पर्वत नाचने लगा। मानसरोवर झील झूमने लगी। इन्द्र लोक की परिया किंगरी की मधुर ध्वनि पर बेसुध होकर नाचने लगीं, यहां तक कि धूप खिल आई थी वह इन्द्र लोक तक नहीं लौटी थी।

राजा ने इन्द्र को भुर्ज पत्र के कोयले से पत्र लिखकर माता को अमृत फल की प्राप्ति के दिए गए वचन का स्मरण कराया।

लाखी जंगल में साधना में तत्पर राजा भर्तृहरि का अठारह हिरणियों सहित हिरण हीरा से सामना हुआ। इस वार्तालाप द्वारा वास्तव में एक ओर नाद ब्रह्म की सर्वोपरि सत्ता का स्मरण कराया गया है वहां १६ हिरणियों द्वारा ६ द्वारों से आवृत देही रूपी हिरणियों के भोग विलास रूपी सांसारिक ऐश्वर्यों का निषेध कर हिरण का मांस खाने को महत्व दिया है। हिरण आत्मारस के आस्वादन का प्रतीक है जिसे पवित्र कुशा के आधात से आध्यात्मिक सदाचार के पालन द्वारा ही चखा जा सकता है।

भर्तृहरि के सिंहल द्वीप प्रविष्टि होने का तात्पर्य साधक का कपाल के सहस्रार में आध्यात्मिक राजसिंहासन पर विराजमान होना है। जहां आत्मानुभूति की पूर्णता में आरूढ़ होने पर संसार के सुख-दुःख जंजाल के प्रतीक भुजड़ों के देश में उनकी बावली के पास धूना लगाई नादब्रह्म (किंगरी) की तन्यमयता सबको नचाकर भी उस आनन्द में निर्लिप्त रहता है।

सिंहल द्वीप का राजा जब उसे सोने के कड़ों की भेंट भेजकर राजमहल में बुलाना चाहता है तो भर्तृहरि इसे ठुकरा देता है। सच्चा योग साधक माया के प्रलोभन में नहीं पड़ता। तब राजा नंगे पैर हाथ जोड़े कर क्षमा याचनापूर्वक महल में चलने का आग्रह करता है। श्रद्धावान और समर्पित साधक को सच्चा योगी अपने आत्मरस के आनन्द का साझीदार बनाता है अन्य को नहीं। यहां पर भी किंगरी बजाकर वह संपूर्ण सिंहल वासियों को राजा सहित नचा देता है। नादब्रह्म की महती ध्वनि ही विश्वब्रह्माण्ड को नचा रही है। नाद तत्व के सिद्धान्त के वर्चस्व का यह डिडिमघोष है। सच्च तो यह है कि सृष्टि में जो भी लालित्य है वह इसी नाद के माधुर्य का प्रसार-विस्तार है। जिससे राजा सहित प्रजा और भर्तृहरि की बहन भी नाचने लगी।

सच्चा योगी कंचन और कामिनी के मोह में नहीं उलझता अतः सोने के कड़ों की भेंट उसे पांव की धूल के समान प्रतीत होता है।

इसके पश्चात् पुनः हिरणियों के झुण्ड की आवृत्ति उसी भाव सांसारिकता से उदासीनता और आत्मरस से रति के योगी की साधक वृत्ति पर बल देने के लिए दोहराई गई है।

एक बार योगपथ में कदम रखने वाला योगी भर्तृहरि की तरह अपने कुल, जाति और देश गत संबन्धों से ऊपर उठ जाता है तभी कहीं जाकर समाहित चित्र हुआ वह नादब्रह्म भी पूर्णता का अनुभव करने में कृतकार्य होता है।

करांगल देश में भर्तृहरि विरमा रानी से भेंट कर उसे पुनः अजबा नगरी में प्रविष्ट होने की घटना से समूचे कुण्डिलनी योग की प्रक्रिया का मार्मिक संकेत कर दिया गया है। नादानुसंधान से दत्त चित्त योगी ही अर्ध की गंगा (कुंडलिनी शक्ति) को जागृत कर उसे सप्तचक्रों का भेदन कराकर ब्रह्मन्ध्र में सदाशिव से मिलाप कराकर अपने साधना लक्ष्य की पूर्ति कर पाता है। विरमा रानी का अजबा नगरी में भर्तृहरि सहित प्रवेश वस्तुतः साधक की कुंडलिनी शक्ति (विरमा रानी) का अजबा विलक्षण नगरी ब्रह्मरन्ध्र की ब्रह्मपुरी में नादब्रह्म में लीन होना है। जुब्बुल की भान्ति कोटखाई का प्रतिपाद्य विषय भी नाथमत की नाद साधना के वर्चस्व और कुंडलिनी योग के वर्चस्व का मधुर वर्णन जिसे बीच-बीच योगी को जिन शक्तियों सिद्धियों का अनुभव होता है उनके प्रभाव से विरोधियों के पराजय की घटनाओं का भी चमत्कारक विवरण प्रस्तुत किया गया है।

नाथ सम्प्रदाय की तात्विक दृष्टि और साधना के विचार से गूगा गाथा का अपना विशेष स्थान है। इसमें कई प्रकार का घटनाओं का मिश्रण हुआ है। वे सब मिलकर नाथ सम्प्रदाय के युगीन महत्व की तत्व चिन्तन, इतिहास, संस्कृति और राष्ट्र की अवस्था पर प्रकाश डालते हैं।

गूगा गाथा के ऐतिहासिक पक्ष

गूगा गाथा का जमनौत्री धुंधकारा से प्रारंभ ही सृष्टि की सत्यात्मक गतिविधि से होता है जब और किसी वस्तु, गुण, सत्ता का प्रादुर्भाव नहीं हुआ था तभी अलख नारायण के संकल्प से सृष्टि की शुरूआत हुई। अलख नारायण ने मनसा माई को प्रकट किया और माई ने विश्व रचना की। पुनः गुरु गोरखनाथ की दैवीय उत्पति से हुई। वरदानी भस्मासुर को मोहिनी रूप धारण कर भगवान विष्णु ने शिव का संकट दूर किया। विष्णु के मोहिनी रूप से शिव का वीर्य स्खलित हुआ जिसे समुद्र की मछली ने धारण किया और उससे मछेन्द्रनाथ का जन्म और उनकी विभूति को गोबर में फैंकने से बालक गोरखनाथ का जन्म हुआ।

गुरु गोरखनाथ ने गंगा जी का अहंकार तोड़ा। मारू देश का सिया घुमारी की साधना के घमण्ड को चकना चूर कर मारू देश के नरेश की रानी बाच्छल को फल देकर गूगा को जन्म दिया। गूगा की माता बाच्छल ने गुरु गोरखनाथ की धूनी पर तप किया किन्तु उसके फल को धोखे से उसकी बहन काच्छल ले गई जिसके दो जुड़वा पुत्र सूरजन और अर्जुन हुए। बाद में पता चलने पर गोरखनाथ जी को

दो बार फल लाने के लिए शिव जी के पास कैलाश पर्वत पर जाना पड़ा। जब बाच्छल गर्भवती हुई और सातवें महीने मायके के लिए रवाना हुई तो जंगल में ईर्ष्यालु काच्छल के द्वारा पाताल के नाग कलिअर की सहायता से वाच्छल की बैलगाड़ी के धौली बैल को घास चरते हुए डंस लिया। इसे गर्भस्थ शिशु गूगा ने आवाज देकर और दो जंगल की जड़ी बताकर उसके लेप द्वारा बैल को जीवित कर दिया। साथ ही मां को आदेश दिया कि वह नाना के घर जन्म नहीं लेना चाहता है। वह नानकू नहीं कहलाना चाहता है। वह अपने पिता के घर गूगा मल चौहान के रूप में ही जन्म लेना चाहता है। अतः माता घर लौट गई। जब बारह माह तक गूगा गर्भ से बाहर नहीं आए तो उन्हें काछल द्वारा मारने हेतु औषधि के बहाने बाच्छल को जहर पिला दिया। वासूकी नाग के आशीर्वाद से जहर का सुलटा प्रभाव हुआ कि गूगा जन्म के रूप में हुआ वह जाहर वीर गूगा कहलाए। बाच्छल ने ख्वाजा की उपासना कर अष्टकुल नागों की कृपा प्राप्त की और पाताल के नाग कलिअर का आशीर्वाद भी प्राप्त किया।

मलय देश के राजा ने गूगा के लिए अपनी बेटी सुरहिल का टीका भेजा और बाद में पश्चिम के सशक्त राजा के बेटे के साथ सगाई का विचार बना लिया। इसका पता अर्जुन और सूरजन को गूगा के पासा खेलते हुए चला। उन्होंने गूगा की गैरत को ललकारा कि उसे सुरहिल से विवाह करके दिखाना चाहिए। इस चुनौती पर गूगा डट गए। माता बाच्छल के समझाने पर भी गूगा ने प्राण त्यागने तक की धमकी दे दी। माता ने गुरु गोरखनाथ का स्मरण किया। गुरु गोरखनाथ ने अपने चेले काहनी को आदेश दिया कि वह सुरहिल से गूगा के विवाह को पक्का करे। काहनी ने पाताल के नागराज कलिअर को पाताल से बुलाकर यह कार्य पूरा करने का आदेश दिया। कलिअर कब्बा बनकर सुरहिल के महलो पर गुटकारने लगा। सुरहिल सहलियों सहित उसे पकड़ने उसके पास पहुंची और उसकी सर्पीली आंखे देखकर डर गई। बाद में वह बाग में झूला झूलने चली गई तो कब्बा भी वहां पहुंच गया। तब कलिअर लघु सांप का रूप धारण कर वहां भ्रमण करने लगा।

सुरहिल ने तालाब में खिले हुए कमल फूल को देखा और सहेलियों से उसे लाने को कहा तो फूल आगे ही आगे चलता गया तब सुरहिल उन्हें लाने तालाब में बढ़ी तो कलिअर ने उसे डस दिया। उसने समझा कोई कांटा चुभ गया होगा। विष न चढ़ने की आशंका से कलिअर विशाल सांप का रूप धारण कर तालाब में चक्र काटने लगा। सुरहिल को आशंका हो गई कि सांप ने काट खाया है। वह बेहोश हो गई। उसे महल में ले जाया गया। वहां कलिअर नाग ने ब्राह्मण वेश में उसे विषमुक्त किया। साथ राजा को परामर्श दिया कि सर्प विष पर अधिकार वाले गूगा मल से ही इसके प्राणों की रक्षा होगी। इस पर मलय राजा ने ब्राह्मण कलिअर के पास ही पुनः गूगा के लिए टीका भेजा और सप्ताह दस दिन के अन्दर विवाह सम्पन्न करने को कहा। मारू देश से गूगे की बारात मलय देश में पहुंचाने में छः महीने लग सकते थे। इस संकट में बाच्छल ने पुनः गुरु गोरखनाथ को स्मरण किया। वह कैलाश शिव के पास जाकर उनसे पौणखटोलुधुंधनाद और शत्रुनाशक भस्म लाए। पवनखटोलू पर गूगा को लेकर वह यथा समय मलय पहुंच गए। इस पर मलय नरेश ने असंख्य बारातियों की खातरदारी के लिए

बनाई सामग्री के नष्ट होने की शंका जताई। इस पर गुरु जी ने धुंधुनाद बजाकर देवताओं सहित बारात खड़ी कर दी और राजा से कहा कि जब तक बारात सुस्ता लेती है आप उनके दो बालकों शुक्र व शनि को भोजन करा दें। बालक बरातियों के ही नहीं राज्यभर के संपूर्ण अन्न को चटकर भी भूखे रहे तब अहंकारी मलय नरेश नंगे पैर हाथ जोड़कर गुरु जी के शरणागत हुए तो उन्होंने अन्नपूर्णा का आवाहन कर बारातियों की आओ भगत की।

सुरहिल के साथ विवाह होने के बाद भी मोसेरे भाइयों अर्जुन-सुरजन का द्वेष गुगा कम नहीं हुआ। गूगा ने उन्हें युद्ध कर मार दिया। इसकी सूचना बाच्छल को मिली तो उसने गूगा को मुंह न दिखाने पर रोक दिया। गूगा गुप्त रूप से सुरहिल के महलों में जाते रहे। इस पर उन्हें पृथ्वी में समा जाने का आदेश दिया गया। इस हेतु वह मक्का मदीना गए — बाद में नीले घोड़े सहित पृथ्वी फटने पर उसमें समा गए। गूगा नवमी के दिन ऐसा हुआ। अतः गूगा नवमी के दिन ही यह घटना घटी थी। कहा जाता है कि पहले गूगा नवमी को सवामन खाण्ड बरसती थी अब रेत बरसता है। उस रेत के प्रयोग से सर्प विष दूर होता है।

गूगा गाथा से उस समय की देश की स्थिति के इतिहास का पता चलता है। यह समय ग्यारहवीं-बारहवीं शताब्दी का था जब पिथौरा राय का दिल्ली प्रशासन था। राजघराने के अन्तःपुर के हर्ष-द्वेष के कुचक्रपूर्ण दुरभि संधि के शिकार थे। राज सत्ता गृह-कलह का शिकार थी। राष्ट्र और समाज की चिन्ता नहीं। इसी से विधर्मीं और विदेशियों का उत्तरोत्तर भारत भूमि पर अधिकार बढ़ने लगा था। गूगा आदि शूरवीरों का शौर्य आपसी द्वेषों को दबाने में समाप्त प्रायः हुआ।

सांस्कृतिक दृष्टि से मछन्द्र नाथ व गोरखनाथ के सबल प्रयत्नों द्वारा योग मूलक रहनी-सहनी, करनी और कथनी का प्रचार प्रसार हुआ। योग सिद्धियों के चमत्कार के प्रभाव से जन साधारण इस ओर झुका। गूगा आदि नाथ सन्तों ने समाज सेवा के विविध क्षेत्रों में लोकहिताय बहुत काम किया। उपरिष्ट बाधाओं से लेकर सर्प विष से निजात दिलाने हुए धनधान्य का वृद्धि के भी आदिदैविक साधनों के क्षेत्र को प्रशस्त किया।

कलिअर नाग का प्रसंग प्रकारन्तर से कुंडलिनी योग का द्योतक है। कुडलिनी नाभि कमल में सोई रहती है। उसे सर्पणी कहा गया है। कलिअर वस्तुत भाव के गुणात्मक दोष—काम, क्रोध, लोभ, मोह व अहंकार आदि जब तक चेतस या अंग बने रहते हैं तब तक दैवीय सम्पदा के भाव सुरहिल (देवभाव में लीन) को डसा जाता रहेगा।

इस तरह कथाओं और गाथाओं में शिव-शक्ति शासन के दिव्य रत्नों की सुन्दर अवतारण हुई है।

गांव दाड़ी बड़ोल, धर्मशाला,
जिला कांगड़ा - हि.प्र.

हिमाचल के निरमण्ड-आनी क्षेत्र में महाभारत गाथाओं के ऐतिहासिक प्रसंग

दीपक शर्मा

गाथाओं का इतिहास

महाभारत के आख्यान, उपाख्यान व कथानक निरमण्ड व आनी क्षेत्राों में गाई जाने वाली उपर्युक्त गाथाओं में निबद्ध है। महाभारत के प्रसंग देव उत्सवों एवं अन्य सामाजिक पक्षों में गायन परम्परा में श्रौत परम्परा से सुनाएं जाते हैं। लोक में महाभारत के कुछ चरितों के नाम अपने भावों के अनुरूप बदले हुए भी दिखाई देते हैं। उदाहरण स्वरूप कुन्ती–नंती, गाथा में नंती का चरित। वस्तुतः यह चरित गांधारी का है परन्तु लोकभाव में यहां गांधारी नंती रूप में प्रचलित है। गाथाकार ने महाभारत के भयानक युद्ध के मूलकारण को एक शवाड़ी (छोटा खेत) पर हुए झगड़े के प्रसंग से जनसाधारण तक समझाने के लिए एक नया कथानक रच डाला परन्तु मूलभाव महाभारत का यथावत् है।

कीचक वध, कर्ण का जन्म व कर्ण के युद्ध और वध के प्रसंग ऐतिहासिक है। रोचकता के लिए गाथाकार वे भले ही अपने कथानक में कुछ परिवर्तन भले ही किया हो परन्तु महाभारत के चरितों, आख्यानों, उपाख्यानों और कथानकों को जनसाधारण तक पहुंचाने में उसके भगीरथ प्रयास को नकारा नहीं जा सकता।

कुन्ती-नंती का परस्पर झगड़ा व पांडव बनवास

नंती कुंती दो बहने साग सब्जी के बाग (शाहड़) में सब्जी के पते चुग रही हैं। छोटी सी बात पर तू-तू, मैं-मैं हो गई। इस तू-तू, मैं-मैं ने बबण्डर खड़ा कर दिया, जो महाभारत के भीषण युद्ध में बदल गया।

चाले बैंहणिएं शागा हेरमें ऊंची।
दुई बैंहणी सै शागा उचदी लागी।
चाला बैंहणिए शागा गैओ हुई।
चुंगी चांगिआ छाबू कीए भौरी।

नित्य की भाँति नंती और कुंती दो बहने साग सब्जी चुगने सब्जी के बाग में गई। बातों-बातों में शाम का सत्र समय हो गया। कौरवों की मां नंती कहती है कि हे! चलो, समय हो गया घर चलते हैं दोनों ने अपने-अपने छाबू (पात्र) सब्जी से भर दिए।

बैंणे बोलाए कुंती दाई पारे, धूरै आ मौड़ुओ झाला।
एऊ बैंहणिए चुंगणे दै
बैंणे बोला कुंती दाई जेतरो खा तेरे शाठ फ्वीणा
तेती खा मेरो एके बौड़िओ भीमा

पाण्डव माता कुंती कहती है, 'हे बहन नंती! बाग के सामने वाले छोर पर मौड़ु नामक सब्जी

लगी है। इसे उठा लेने दे।' कुंती आगे कहती है कि जितना तेरे साठ पुत्र मिलकर खाते हैं उतनी सब्जी तो मेरा एक पुत्र भीमसेन अकेला ही खा जाता है।

बैंणे बोला नौंती चैई पोरू, जौळी तेऊ बौउदे ढाढा।
बैंणे बोला कुंती दाई, मेरे भीमा लै गाड़ी न देए।
शागे शाहड़ी हुई लड़ाई, झिटदी झिटदी धौरा लै आई।

इस पर छोटी बहन (चैई) नंती कहती हैं, 'तेरे भीम का पेट तो बैल की तरह है। तेरे भीम के पेट को आग क्यों नहीं लग जाती। उसका पेट फट क्यों नहीं जाता। इस पर क्रोधित होकर कुंती कहती है, मेरे भीम को गाली मत दे।' बस! छोटी सी बात का बतंगड़ बन गया। इस तू-तू , मैं-मैं पर नंती ने बड़ी बहन कुन्ती के कान की बाली नोच डाली। कुंती ने नंती के सिर की गुत खींच डाली। धक्का-मुक्की शुरू हुई। दोनों गाली गलौच करते हुए अपने-अपने आवास (बाड़ी) चली गई।

उधर भीमसेन सायंकाल के समय जंगल से शिकार खेलने के बाद घर लौटता है। क्या देखता है अभी तक घर में चूल्हा नहीं जला। मां कुन्ती दुःखी हो कर रो रही है।

खूडै धौंका सीमरा धिंणुआ, फौड़े धौंका कुकटी खाई
रौसुए धौंका लौछुए बरैई, भीम सीणा, आऔ हेड़िए बौंणे।

भीम देखता है कि गौशाला में सीमरा नाम की गाय दुःखी है। दूसरी मंजिल में पांण्डवों की कुतिया तथा तीसरी मंजिल में लौछू नाम की बिल्ली मासूम हो कर सिसक रही है। सभी भूखे प्यासे सो गए हैं। भीम ने मां से सारी बात पूछी कि क्या हो गया है। कुन्ती ने सारी कहानी सुनाई –

भीम सैंणा नाहौ कौरूए बाड़े।
गाचिए पाए तेऊए जूंए पासै।
पारा भीमा हाका मारा हाका।
भीतारा शूंणा सौ तारा जोधा नराणा।
थारी माउड़िए मेरी माउड़ी लै गाड़ी दीनी।

भीमसेन गुस्से में लाल पीला होकर कौरवों के आवास में गया। कमर के पटके में जुए के पासे डाल कर वहां पहुंचा तथा कौरवों को ललकारने लगा। भीतर से दुर्योधन ने उसकी आवाज सुनी। भीम कहता है, अरे कौंरवों! तुम्हारी मां ने मेरी मां को गाली दी है।

कौरूं म्हारै कौठे ना रोहिआ म्हारै वांडै कौरने खांडै।
पैहलै जूऔ तीनै शागै लाऔ शाहड़ी।
शागै शाहड़ी नाहौ कौरूएं बांड़े।
दूजो जूऔ जैजैआ तेहा कोठी ओ।
जै जै कोठी नाही तीना कौरूए बांडै।

भीमसेन कहने लगा कि अब हम लोग इकट्ठे नहीं रह सकते। अब हमें बंटवारा करना चाहिए। कौरवों पांडवों ने जूआ खेलने का निर्णय लिया। पहला दाव साग के बाग का लगा जोकि कौरवों ने जीता। दूसरा दाव जै जै महल का लगा। वह बाजी भी कौरवों के पक्ष में गई। पाण्डव जुए में बुरी तरह पिट गए।

एगौ भाइयो जो जिउणों ना रौहौ।

ऐबे भाइयों हामा लै पांडवै ना बोला।
हुई गैए मांगदे, पांजै भाई सै चालदै हुए।

पाण्डवों को बनवास हो जाता है। पाण्डव कहते हैं कि अब हमारा जीना मुश्किल हो गया है। पांचों भाई मांगने वाले हो गए तथा वन की ओर चल पड़े।

कीचंक बध

डंडियर कोट (लाक्षागृह) के अग्निकाण्ड त्रासदी से बच कर पांडव नई नगरी चले गए। पाण्डवों के १२ वर्ष वनवास के बीत चुके थे। अब उनके दो वर्ष अज्ञातवास शेष था'

बैंणें बोला ना बैणे बोलाना, बैंणे बोला हौरी कुंता माई।
हौठी बौचे मेरेओ-मेरेओ, हौठी बौचै पांज़े भाई पाण्डवै ना।
एवै मेरे ओ ना - २
बैंणे बोला ना २, बैंणे बोला हौरी कुंता माई।
चाला मेरेओ नाहमें चाला, मेरे ओ नौई नाहवें नौगरी लै।
इदि मेरे ओना २, बैरी गौ जिंउंणे न दे आ।
तिदी लाग में ना २, तिदि लाग में बैहराटी बैठू।
नौई नौगरी ना २, कुटी जिमें पीशिया।

मां कुन्ती कहती है, 'हे मेरे पुत्रों! हम बड़ी मुश्किल से बच गए। अब भेष बदल कर नई नगरी चलते हैं। वहां राजा विराट के नौकर (बेठू) लगते हैं। लोगों का धान कूट पीस कर जीएंगे क्योंकि यहां बैरी हमें जीने नहीं देंगे।

पांडव दिन को भोजन हेतु काम करने बाहर जाते थे। रानी पांचाली लोगों का धान कूटती थी। एक दिन रानी पांचाली को अकेला देखकर राणा गिचक (किंचक) धनकुटी (कानी) के पास पहुंचा तथा उसे तंग करने लगा। वह पांचाली के समीप गेंद खेलने लगा। कभी गेंद ओखली (कानी) में फेंकता तो कभी आसमान की ओर। गिचक ने पाचांली से काम भोग का प्रस्ताव रखा।

तेरे हो आहणो तु गै आहे मौदरे चारे।
ना गै हो आहणो तौं चाकीया नीऊ शाठी श्वारै।

हे पाचांली, ''यदि तूने प्यार से आना होगा तो आ जाना अन्यथा मेरे साठ भाई तुझे उठा कर ले जाएंगे। इतना कह कर गिजक वहां से चला गया। शाम को घर जाकर मां कुंती पाचांली से पूछती है।

तौम्हें ज़िज़ियो ना - २, तौम्हे ज़िज़ियो ऋणी हुई ज़ीणी।
किता ज़िजियो ना - २, किता तौमें भोजने भूखी।
किता ज़िजियो ना - २, किता तौमं पैतांणे रूखी।
किलै बौहुओ ना - २, किलै तौमे रूठी ना तूटी।
नैही इजियो ना - २, नैही मुं भोज़ने भूखी।
नैही इजियो ना - २, नै ही मुं पैताणे रूखी।
कानी गिज़का ना - २, जो बैरी मुं कुटणे ना दैआ।
घौड़ी फैंका गिंदडू - २, घौड़ी फैंका कानी केरे गुतुए ना।
घौड़ी फैंका गिंदडू - २, घौड़ी फैंका सौरगे डुवारिए ना।

'हे बहू तुम आज परेशान व दुःखी क्यों लग रही हो। क्या आपने आज भोजन नहीं किया या आपके पैर तेल के बिना रूखे हैं। हे बहु! तुम रुठी रुठी सी क्यों लग रही हो? पाचांली कहती है, 'नहीं सासू मां ऐसा कुछ भी नहीं है। राजा गिचक आज मुझे तंग करने आया। उसने मेरे काम में बाधा डाली। वह ओखली के पास आकर ओखली में गेंद फैंकने लगा और मुझे डराने धमकाने लगा तथा काम भोग का प्रस्ताव रखा।

भीमें मोटड़े ना - २, सौगे जांणू रौदिना कौरा।
बैणै बोला हौरी भीम सैणा, तुमैं राणिए कीलै रोए।

भीम की गोदी में बैठकर पाचांली ने रोते हुए सारी व्यथा सुनाई। भीम ने कहा, तू रो मत। गिचक को कहना कि कल रात माड़िए नामक देउड़ (देवस्थान) में आना। मैं तुझ से विवाह करने को तैयार हूं। पर तूने अकेले आना, मैं तेरा इतजार करूंगी। उससे यह भी कहना कि अच्छा-अच्छा स्वादिष्ट भोजन भी साथ लाना क्योंकि हम बारह वर्षों से भूखे हैं।

नाही रौहो माडिए देउड़ै ना, तेती आओ ना गिजंका राणो।
बैणे बोला बौड़ियारा भीमा, आणे तुए जांणू लाडू आणे भोजना।
बोड़िया भीमा सौनू जाणू भोजने वेशो, वैणे बोला गिज़का राणो।
एबे तुए जाणु छैंण कौर छातरौ, बौड़िया भीमा गौ मालशा कौरदौ लागौ।
एके फेरो ना एके फेरो बौड़िया दीनो भीमै, दूजो फेरो ना गिंचका कौठे भा रूषौ।

द्रौपदी का सुंदर रूप बनाकर भीम माड़िए देउड़ में पहुंच गया। कुछ समय के बाद राणा गिचक भी वहां पहुंच गया। भीम ने कहा, ''प्रियतम! कई वर्षों से भूखी प्यासी हूं। पहले भोजन कर लेते हैं। भोजन से निवृत्त होकर राजा गिचक कहता है, ''पांचाली! बिस्तर आदि बिछा दे अब विश्राम करते हैं।'' पांचाली (भीम) कहती है, प्रियतम् आप थके हुए होंगे। पहले आप के पांव में मालिश कर दूं। भीम ने विरोजा साथ ला रखा था। भीम ने पांव में विरोजा मल कर उसकी सारी चमड़ी गर्दन तक उतार कर गिचक का वध कर दिया।

कर्ण जन्म

ऋषिए हौआ छौह सात वेटी।
एना सुरजा चौन्दरो मुख हेरा।
माटी गाही ना जै पैर ला।
आंगड़े आई मोघी चनाड़ी।
बाहरा का हाका मारा हाका।
भीतरा शूंणा खौण्ड़कीआ रीशौ।
तु कै बोलड़ी बोलै।
आपणी बेटी तु दशौहरै नांहदी छाड़।
बैणे बोला खौण्ड़की रीशौ।
तेरी मोघी ए फूटी की सारी।
ज़ै गौ बेटी आ सौती जौती।
जै गौ तोलिआ फूला सौंगे।
बैणे बोला मोघी चनाड़ी।

सौए बालका धौरनी बाशैड़ौ।
बैणै बोला कौरना बीरा।
कूडू माए काछितरा, धूड़ौ, जांणू ऊज़औ डांडौ।
धूड़ौ ज़ाणू माए कीले ऊजुऔ डांडौ।
कूडू माए काछितरै, शाठा कौरूंओं जूझा लागौ जूझा ना।
शाठा माए कौरूऔ पांजा पाण्डवेओं।
जूझा लागौ जूझा ना।

हंस राज गर्ल कहता है, 'हे प्रिये! यह शब्द मत कह। यह तो सूर्य देवता का पुत्र है।' इस प्रकार हंस ढांक में बालक का पालन-पोषण हुआ। बालक बड़ा हुआ। बड़ा होकर एक दिन कर्ण वीर मां हंसगर्ली से कहता है, ''हे माता! मुझे इस हंस ढांक में डर लग रहा है। मुझे धरती पर उतार दे।' कर्णवीर कहता है, हे मां! यह धूल तूफान क्यों उठ रहा है? लगता है कुरूक्षेत्र में शाठ कौरव व पांच पांडवों का युद्ध छिड़ गया है। हंस गर्ल ने सारी कथा कर्ण वीर को सुनाई।

कुरुक्षेत्र में कर्ण द्वारा पांडवों को पछाड़ना

चालदौ ता हूऔ कौरना बीरा।
नांही गैऔ औधमा बातै।
तिदी भिता मैड़ौ तेऊ कौरना बीरा कै।
तिदी मैंड़ौ सुरज़ा भराड़ौ।
बैंणै पौरी बोला सुरज़ा भराड़ौ।
तु नू मेरेआ कौसा रौ ज़ाऔ।
बैणै पौरी बोला कौरना बीरा गौ।
तु नू शूणै औरज़ा मेरी ना।
हाड भिता खांऊ तेऊ सुरज़ा भराड़ेओ।
जुण मुल्हे कौरमा दीनो।
हाड़ भिता खाऊं तेसो कुंता माईओ।
जौहरे कुछी जौरमा दीनो।

कर्णवीर चलते चलते कुरूक्षेत्र के अर्धमार्ग में पहुंच गया। सूरज यह सारा दृश्य देख रहा है। सूर्य, मृत्यु, लोक की ओर उतरने लगा। सूर्य के प्रचण्ड ताप से धरती पेड़-पौधे झुलसने लगे, परन्तु कर्ण के उपर शीतल छाया व वायु चल रही थी। सूर्य देवता चकित हुए और पूछने लगे, ''हे पथिक! तू किस का पुत्र है? तेरा परिचय क्या है?'' कर्णवीर ने बड़े क्रोध भरे शब्दों में कहा, ''मैं उस सूरज का हाड़ मास खा जाऊंगा जिसने मेरे कर्म में यह सब लिखा। उस कुंती मां को भी जीवित नहीं छोड़ूगा जिसकी कोख से मैंने जन्म लिया।

बैणै बोला सुरजा भराड़ौ। बुरौ तु ना मूलै बोले।
औसाली ता होंऊ तु नू मेरो कौरना बीरा।
हुऔ लोड़ी सौरगा बास। उड़ी नाहौ सौरगा लै।
सौरगा डुआरीए तेऊ ए पाई सुरज़ा गांठी।
बैणै बोला सुरज़ा भराड़ौ। नारी भिता सेटे वेटेआ ना बेशे
ऐबै मेरे बेटेआ कौरना बीरा।

आपणी बेटी तु तोली देए तोलिआ।

खण्डक ऋषि की सात पुत्रियां थी। वे इतनी सुन्दर थी कि सूरज और चन्द्र का मुख भी नहीं देखती थी तथा न ही वे धरती पर पांव रखती थी। एक दिन आंगन में मोगी चनाड़ी पहुंची तथा बाहर से ऋषि को आवाज़ मारने लगी। ऋषि से कहने लगी, 'हे ऋषि! अपनी पुत्रियों को तीर्थ स्नान के लिए भेज।' ऋषि क्रोधित होकर कहने लगा, 'अरे मोगी! तेरी आंखे फटी है या सारी है? मेरी पुत्रियां सती-जती हैं। ये नहीं आ सकती है।' मोगी ने विनम्रता पूर्वक कहा, 'हे ऋषि! तू अपनी पुत्रियों को तोल कर भेज तथा तोल कर ही वापिस ले जाना।

तोलणी लाई ज़ो गुंदरी गुधारी।
सै गौ निखुवी एके जांणू मांसै ना।
तोलणी लाई सौ पौदामी प्रितमी।
तोलणी लाई सै नौंती कुंती।
च़ालदी हुई ज़े छौए साता बेटी ना।
नाही गौ गेई दाशौहरै नहांदी ना।

गुंदरी, गुधारी, पदमी, प्रितमी, नंती, कुंती सभी ऋषि पुत्रियों को तोला गया। उनका वजन एक-एक माशा निकला। फिर सभी पुत्रियां दशौरा (तीर्थ स्नान) नहाने चल पड़ी। अंधेरी प्रातः काल का समय था। सूर्य भगवान की नजर कुंती पर टिकी हुई थी। कुंती रास्ते में चलती-चलती विश्राम के लिए एक गुफा की ओट में बैठ गई। सूर्य भगवान का वहां पहुंचना होता है। सूर्य ने छः मास की एक रात डाल दी। सूर्य भगवान की कामाग्नि द्वारा कुंती गर्भित हो गई।

कूंता माई लाज़ा लागी लाज़ा।
हुऔ बालका बाज़ैल़ाली लै शोटौ।
न्हाई धोईआ शुजता हुई।
सौरगा हेरा सुरज़ा भराड़ौ।
सुरज़ा भराड़ैए आदि गौरला भेज़ौ।
चूंजाडूए औमतरा आणों।
फाड़ेकाटुए दीनों शाड़ैऔ।
आदी गौरलै चूंजाडुए चूंगौ।
आदी गौरलै हांसै ढौंकै नींओं।

कुंती माई को लोक लाज लगी तथा नवजात शिशु को बिज़िया (भांग) की झाड़ियों के बीच फेंक दिया। कुंती नहा धोकर पवित्र हुई। आसमान से सूर्य भगवान यह सब कुछ देख रहा है। सूर्य ने हंसागर्ल पक्षी को झाड़ियों में भेजा। हंसागर्ल ने अपनी चौंच में अमृत व गौंत्र लाया तथा पंखों से शिशु पर छिड़काया। हंसागर्ल शिशु को चौंच में उठाकर हंसा ढांक गुफा में ले गया।

जोए बालका सूरजा भराड़ेओ ज़ाऔ।
हांसै ढौंकै पौड़ी साकोडा।
बैंणै बोला कौरना वीरा।
मुंए गै माए धौरानी बाशेए।
हांसै ढ़ौंकै लागी मूं डौरा।

तु ता खेले खुली लड़ाई ना।
तौखा जांणू कौरना वीरा बेटैआ।
शाठा जांणू वाणा गैए उछाड़ी।

सूर्य कहता है, 'मुझे बुरे शब्द मत बोल। यदि तू मेरा ही पुत्र कर्णवीर है, तो तुझे उडारी मार कर आसमान में पहुंचना चाहिए।' कर्ण ने युद्ध की हठ ठान रखी थी। सूर्य ने कर्ण के सिर में बालों की सात गांठे डाली (सात सधोए) तथा रक्षा कवच दिया। सूर्य ने कहा, 'हे पुत्र! जब तक तेरे सिर में यह सात गांठे रहेंगी, तुझे कोई भी नहीं मार सकेगा। हे पुत्र! स्त्री के नजदीक भी नहीं जाना क्योंकि ऐसा करने से यह रक्षा कवच टूट जाएगा। जा कर्ण! खुल कर युद्ध लड़। बेटा! तू एक साथ साठ बाण चला सकता है।'

नाही भिता गैए कुडू काछितेरे।
तिदी जाणू जूझा लागौ जझाना।
आरशे कनारै पांजै पांडवे।
पारशा का जाणू शाठा कौरूं ना।
पैहलै जै आगू काडौ कौरना बीरा।
तेउए जांणु बाणै बाही बाणै।
शाठा तेऊआ वांणा उच्छड़े कौरना वीरा।
पांज पांडवै हारी नाहे हारिया ना।

कर्ण वीर कुरूक्षेत्र पहुंच गया। कौरवों-पाण्डवों की आर-पार की लड़ाई शुरू हो चुकी थी। कर्ण कौरव पक्ष में गया। कौरवों ने घमासान युद्ध के बीच कर्ण को सबसे आगे निकाला। कर्ण ने एक ही बार में साठ बाण दागे। पांच पांडवों को नाकों में दम कर दिया। पाण्डव बुरी तरह परास्त हुए। सूर्यास्त हुआ तथा सभी योद्धा अपने सैनिक शिविरों में चले गए।

बैंणै भिता बोला बौड़िया भीमा। कौरूं बाड़े गोत्री कूंणा।
बैंणै पौरी बोला कुंता माई गौ। पांज पाण्डवै तौमै मेरे।
छौइऔ कौरो खोजू।

अपने शिविर कक्ष में बैठकर भीम अपनी मां से कहता है, 'हे मां! कौरव पक्ष में ऐसा कौन सा योद्धा है, जो हमारे गोत्र वंश का लगता है।' कुंती बड़ी चतुराई भरे शब्दों में कहती है, 'हे पुत्रों! तुम पांच पाण्डवों के अतिरिक्त मेरा छठा कौन हो सकता है।'

कर्ण वध का षडयन्त्र

बैंणै बोला शाठ कौरूं।
आज माउसी कीदा का आई।
बेश मेरी आमिए तुनु जाणु भीतरै आए।
बैंणै भिता बोला शाठ कौरूं।
तु नू माए भोजना खाए।
बैंणै बोला कूंता माई।
तु बेटेआ मुखै धौरमा देए।
तेउए जाणु बेटेआ धौरमा देए।

तुनु जाणु मेरी कुमबड़ी बेशेना।
तु बेटेआ तु कीदा का आऔ।
बैणै पौरी बोला कौरना बीरा।
मुंगै जाणु माए सौरगा आऔ डुआरिए।

कुंती को जब मालूम हुआ कि कर्ण कौरव शिविर में गया है, तो वह शाठ कौरवों के शिविर में चली गई। कौरवों ने कहा कि हे मौसी! आज कैसे आना हुआ। चल घर में बैठते हैं। भोजन के लिए पूछा। कुंती बोली, 'हे पुत्र! पहले मुझे धर्म वचन दे। फिर भोजन करूंगी।' कर्ण ने धर्म बचन दिया। कुंती ने भोजन किया तथा कर्ण से कहा, 'कि बेटा! मेरी गोदी में बैठ जा।' गोदी में बिठाकर उसे सहलाते हुए कुंती कहती है कि बेटा! तुम कहां से आए। कर्ण ने कहा कि स्वर्ग मण्डल से आया हूं।

बैणै बोला कूंता माई। मेरे सीरे गौरदौ बेशो ना।
कौरना बीरा सौनू जाणू उटाड़ो फीरौ।
तेउए गौ सीरे साते खोली सुरजा गांठी।

कुंती ने कर्ण का सिर खुजलाते हुए कहा कि बेटा, तेरे सिर में गरदा बैठा है। कर्ण ने अपना सिर मां की गोदी में नीचे झुकाया तथा कुंती ने उसकी सिर में गांठी हुई सात सूरज गांठे खोल डाली।

आही भिता गेई कूंता माई। आही गेई पांडवे बाड़ी।
बैंणे पौरी बोला कूंता माई।
कौरू बाड़े गौत्री नैही कोएना।
एवै तौमैं बेटेओ खुली लड़ाई खेला।
कूडू माए काछितरे तीने जाणू जूझा लागौ जूझा।
आरा पारा का बाण लागै, कौरै हार कौरै जीत।
शाठा भाइए कौंरूए, आगू काडौ कौरना बीरा।
एकी भिता बाणै बाही बौड़िए भीमै।
कौरना बीरा हूऔ सुरगा बासा।
बैणै पौरी बोला शाठा कौंरू।
म्हारौ गौ भीमा किछ ना कीऔ।
भाई गौ भीमा आपनो मारौ।

कुंती माता पाण्डवों के पास जाकर कहने लगी, 'हे पुत्र! कौरव के सैनिक दल में हमारा कोई गोत्री नहीं है। अब तुम खुलकर लड़ाई करो। अगले दिन फिर युद्ध शुरू हुआ। युद्ध भूमि में कौरवों ने कर्ण को सबसे आगे निकाला। भीम ने अपने बाण द्वारा कर्ण को मार गिराया। शाठ कौरव कहते हैं, 'अरे भीम! हमारा क्या बिगड़ गया। तूने तो अपने ही भाई कर्ण को मारा है।

गांव व डा. निरमण्ड
जिला कुल्लू (हि.प्र.)

तूम्बा भजन

डॉ. राकेश कुमार शर्मा

देव भूमि हिमाचल प्रदेश के ग्राम्य समाज में गायन की प्राचीन समय से समृद्ध परम्परा रही है। धार्मिक अनुष्ठानों, यज्ञ (जग), प्रीतिभोज आदि की पूर्व संध्या पर जागरण, कीर्तन, जगराता, भजन तथा भक्त आदि नामों से यह परम्परा प्रचलित है। जिसमें मनोरंजन के साथ-साथ समाज को सामाजिक संस्कृति एवं ऐतिहासिक संदेश दिया जाता है।

भजन भी गायन की एक ऐसी विधा है जिसे हमीरपुर, बिलासपुर, कांगड़ा व मण्डी जनपदों के ग्राम्य क्षेत्रों में गाया जाता है। किन्हीं-किन्हीं क्षेत्रों में इस विधा को तूम्बा भजन, भजन, भक्त या सन्तवाणी तथा गायकों को भजनी या रागी कहा जाता है।

भजन गायन में तूम्बा या तम्बूरा, खंजरी, करताल जिसे खरताल या खड़ताल व मंजीरां या कंसियां कहा जाता है। गायन के समय इन चारों वाद्ययन्त्रों का प्रयोग किया जाता है। गायन प्रायः कम से कम दो-दो गायक टोलियों द्वारा व कभी-कभी तीन या चार टोलियों द्वारा किया जाता है। प्रत्येक गायन टोली में दो से तीन गायक होते हैं। एक मुख्य गायक जो एक हाथ में तूम्बा तथा दूसरे हाथ में करताल (खड़ताल) धारण कर गायन करता है जिसे रागी या ज्ञानी भी पुकारा जाता है। दूसरे गायक के हाथ में खंजरी व तीसरा गायन के पास मंजीरा या कंसियां होती है। ये दोनों मुख्य गायक के सहयोगी गायक होते हैं। गायक टोलियां खुले आंगन में एक अलाव जिसे स्थानीय बोली में घ्याना कहते हैं उसके आस-पास उचित आसन पर विराजित कराया जाता है।

भजन आयोजक प्रत्येक गायन टोली को पानी का लोटा, एक थाली में शक्कर तथा श्रद्धानुसार कुछ रुपये आयोजन शुरू होने से पूर्व भेंट करता है। पूर्व में गायक शक्कर या गुड़ का बीच-बीच में गला ठीक करने हेतु प्रयोग करते थे अब मिश्री व इलायची व सोंफ आदि में परिवर्तित हो गया है। पूर्व में इन गायकों को आयोजकों द्वारा पारिश्रमिक देने की प्रथा नहीं थी।

भजन गायन एक निर्धारित क्रम में गाया जाता है। प्रारंभ में देव आहवान स्तुति जिसमें गणेश भगवती स्तुती तथा ओंकार वन्दन किया जाता है। ओंकार वन्दन (ओंकारा/ओमकारा) में सृष्टि रचना का गायन किया जाता है।

गायन के इसी भाग में गायक टोलियों के मध्य शब्द महिमा व तत्वूज्ञान बोध सम्बन्धी प्रतिस्पर्धात्मक प्रश्नोत्तरी होती है। एक गायक टोली अपनी गायन बारी में गायन में ही प्रश्न करता है जिसका उतर दूसरी टोली को अपनी बारी में अवश्य देना होता है। उतर न देने या अपेक्षित उतर ने आने पर वह टोली पराजित मानी जाती है। ऐसी स्थिति में विजेता टोली पर खूब धन वर्षा 'बेलों' के माध्यम में होती है।

जैसे पूर्व में कहा गया है कि भजन आयोजक द्वारा गायकों को कोई पारिश्रमिक देने की प्रथा नहीं रही है अतः यह गायक टोलियों के गायन, ज्ञान व प्रभावित क्षमता पर निर्भर होता है प्रायः वे आए हुए श्रद्धालुओं को अपने ज्ञान से कितना प्रभावित करते हैं। जब कोई श्रोता गायकी से रोमान्चित होता है तो वह योग्यतानुसार अपने या किसी अपने प्रियजन के नाम से धन राशि भेंट करता है और ''गायक'' उस भेंटकर्त्ता के सम्मान व धन्यवाद में 'वेल' गाता है। कुछ वेल कवित तो गायक तत्कालिक ही गढ़ता है। उदाहरतः – वर्ष १९७१ के युद्धोपरान्त एक ''भजन'' में जब छुट्टी पर आए एक सैनिक ने १० रुपये की वेल की तो गायक टोली ने तत्कालिक गढ़ा कवित इस प्रकार गाया -

ओ लाशां देखी के कदी नी घबरान्दा।
सूबेदारा तेरा धन जिगरा।।

गायन के तृतीय चरण में जो रात्रि लगभग २ से ४ बजे तक होता है, सन्त वाणी गायन होता है तथा रात्रि के अन्तिम प्रहर में लगभग चार बजे उपरान्त ऐतिहासिक तथा पौराणिक कथाओं, प्रसंगों का अतिरोचक गायन होता है जिसमें राजा मोर ध्वज, रामयण प्रसंग - मातृ-पितृ भक्त 'श्रवण' बेटा, पौराणिक आख्यान - राजा भर्तृहरि - पिंगला रानी, पूरण भक्त, भक्त प्रहलाद - नरसिंह भगवान, काल्पनिक कथानक रूप बसन्त तथा ऐतिहासिक प्रसंग रानी किरणा - पृथ्वी राज चौहान इत्यादि मुख्य रूप से गाए जाते हैं।

रात्रि भर चलने वाले इस कार्यक्रम में धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक एवं ऐतिहासिक विषयों पर खूब चर्चा होती है। यह भजनी बीच-बीच में सामाजिक कुरीतियों पर भी कटाक्ष करते रहते हैं ताकि समाज सही दिशा में अग्रसर हों। ज्ञान व मनोरंजन का यह एक उत्तम साधन है।

'शब्द' वेदवाणी तत्वज्ञान है जिसका वर्णन सरल भाषा में स्थानीय लोगों की समझ योग्य बनाकर गाया जाता है। यह गायक टोलियों में प्रश्नोतरी रूप में चलता है। श्रद्धालु भाव-विभोर होकर ज्ञान शब्द को सुनते हैं।

सह आचार्य इतिहास विभाग, जनरल जोरावर
सिंह महाविद्यालय धनेटा, जिला हमीरपुर (हि.प्र.)

यात्रा वृत्त

तालों की नगरी नैनीताल

डॉ. दायक राम ठाकुर

संयोगवश इस बार नैनीताल घूमने का मौका मिला। नैनीताल एक रमणीक पर्वतीय पर्यटन स्थल है। नैनीताल की समुद्र तल से ऊंचाई करीब २००० मी. है। उतराखण्ड राज्य मूलतः दो क्षेत्रों गढ़वाल तथा कुमांऊ क्षेत्रों में बंटा हुआ है। कुमांऊ क्षेत्र मैं नैनीताल के अलावा रानीखेत, अल्मोड़ा, कोसानी, मुनसयारी, बागपथ, पिथौरागढ़, धारचूला, इत्यादि स्थान प्रमुख हैं। नैनीताल में उत्तराखण्ड राज्य का गर्वनर हाऊस तथा उच्च न्यायलय है। नैनीताल को भारत में झीलों की नगरी या झीलों का जिला कहा जाता है। नैनी का शाब्दिक अर्थ है आंख और ताल का अर्थ है झील। नैनीताल 'छखाता' परगने में पड़ता है। छखाता नाम 'षष्ठिखात' से बना है। षष्ठिखात का तात्पर्य साठ तालों से है। इस आंचल में पहले साठ मनोरम ताल हुआ करते थे। इसलिए इसे षष्ठिखात कहा जाता था। आज इस आंचल को 'छखाता' नाम से जाना जाता है। स्कन्द पुराण के मानस खण्ड में नैनीताल को त्रि-ऋषि सरोवर कहा गया है क्योंकि यह क्षेत्र तीन ऋषियों से जुड़ा हुआ है – अत्रि, पुलस्य और पुलह। इन्हें यहां जब जल नहीं मिला तो उन्होंने यहां एक गड्ढा खोदा और मानसरोवर झील के पानी से भर दिया। ६४ शक्तिपीठों में से नैनीताल एक प्रमुख शक्तिपीठ है। पुराणों में उल्लेख है कि यहां मां सती की बायीं आंख गिरी थी। ऐतिहासिक दृष्टि से १८१४-१८१६ के मध्य एंगले नेपाली युद्ध के पश्चात् कुमाऊं का पहाड़ी क्षेत्र अंग्रेजों को कब्जे में चला गया था। इससे पूर्व यहां गोरखाओं का कब्जा था। नैनीताल के चारों तरफ सात पर्वत चोटियां हैं। शरद् ऋतु में यहां बर्फ पड़ती है, एक तरफ इन चोटियों से बर्फीले हिमालय पर्वत के दर्शन होते हैं तो दूसरी तरफ आंख के आकार की नैनीझील। अंग्रेजों द्वारा स्थापित इस पर्वतीय क्षेत्र में अनेकों प्रतिष्ठित विद्यालय है जैसे शेरबुड़, बिरलाहॉऊस, लॉग वियू स्कूल इत्यादि। नैनीताल जाने के लिए अनेकों मार्ग हैं। भारत के किसी भी ओर से रेलमार्ग द्वारा, काठगोदाम तक पहुंचा जा सकता है और काठगोदाम से सड़क मार्ग द्वारा डेढ़ घण्टा सफर करके नैनीताल पहुंच सकते हैं। वैसे तो नैनीताल वर्ष के किसी भी ऋतु में जा सकते हैं परन्तु मई जून तथा सितम्बर, अक्तूबर, नवम्बर सबसे उत्तम महीने हैं जब हरियाली यहां अपने यौवन पर होती है। उतराखण्ड में मंसूरी तथा नैनीताल दो ही ऐसे पर्वतीय पर्यटन स्थल हैं जहां मैदानी क्षेत्रों (देहरादून व काठगोदाम) से पर्यटक एक

घण्टा सड़क मार्ग का सफर करके पहुंच सकते हैं।

मैं व मेरा परिवार के चार सदस्य एक अप्रैल २०१८ रात्रि बस सेवा से १०:३० बजे मण्डी से नाहन के लिए रवाना हुए, दो अप्रैल प्रातः ७:३० बजे हम नाहन पहुंचे। नाहन में अपने एक पुराने मित्र के घर थोड़ा विश्राम किया, नाश्ता किया। तत्पश्चात् श्री रेणुका दर्शन के लिए निकले। करीब एक घण्टे के सफर के पश्चात् हम ददाहू पहुंचे। ददाहू से रेणुका झील तक करीब १.५ कि.मी. तक पैदल यात्रा कर गिरि नदी पार करके श्री रेणुका जी पहुंचा जा सकता है। झील की परिक्रमा की, मन्दिर दर्शन किए व वापिस ददाहू आ गए। यात्रा के पश्चात् किसी मित्र से बातचीत में यह खुलासा हुआ कि हम केवल परशुराम ताल दर्शन करके वापिस आ गए थे। हम भूलवश परशुराम ताल को ही रेणुका झील मान बैठे। परशुराम ताल के पास कोई चिन्ह पट्टिका हमें नहीं दिखी जो हिमाचल प्रदेश की सबसे बड़ी प्राकृतिक झील की तरफ संकेत करता हो। यद्यपि हमारी ट्रेन देहरादून से रात्रि १०:५५ बजे थी इसलिए एक पूरा दिन हमारे पास था। हमारे पास रेणुका या मंसूरी दो विकल्प थे और हमने श्री रेणुका जाने का विकल्प चुना तथा अज्ञानतावश हम रेणुका झील के दर्शन नहीं कर पाए। कई मित्रों से वार्तालाप में यह पता चला कि इस तरह की गलती कई अन्य मित्रों को भी लग चुकी है। ददाहू वापिस जाने के पश्चात् हम बस द्वारा सीधे पांवटा साहिब होते हुए देहरादून पहुंचे। अनुसूचित जाति कानून को लेकर २ अप्रैल को किए जा रहे भारत बन्द के कारण हमारी ट्रेन ३ घण्टे देरी से चली। अखिरकार अर्धरात्रि के पश्चात् २:३० बजे हम देहरादून एक्सप्रैस से काठगोदाम के लिए रवाना हुए। हरिद्वार, लसकर, नजीबाबाद, मोरादाबाद, रामपुर, बिलासपुर रोड़, रुद्रपुर, लालकुआं, हल्द्वानी होते हुए ३ अप्रैल, ११:३० बजे प्रातः हम काठगोदाम पहुंचे। काठगोदाम से टैक्सी द्वारा १२:३० दोपहर बैधशाला, नैनीताल पहुंचे। हम चार दिन वेधशाला में स्थित अपने मित्र डॉ. हूम चन्द वर्मा के निजी आवास में ठहरे। यहां यह बात उल्लेखनीय है कि मण्डी जनपद के तहसील करसोग से सम्बन्ध रखने वाले डॉ. हूम चन्द वर्मा आर्यभट्ट प्रेक्षण विज्ञान शोध संस्थान (एरीज) Aryabhatta Research Institute of observational Sciences (ARIES) वेधशाला, नैनीताल में ई-ग्रेड वैज्ञानिक हैं। ऐरीज उत्तर भारत का सबसे महत्वपूर्ण खगोल शास्त्र शोध संस्थान है। इस स्थान को वेधशाला के नाम से जाना जाता है। यहां १६७० में ०१ मी. व्यास की दूरवीन स्थापित की गयी है। इसके अलावा नैनीताल से ४५ कि.मी दूर देवस्थल नामक स्थान में तीन दूरवीन स्थापित की गई। आकाशीय पिण्डों पर अध्ययन करने के लिए २०१० में स्थापित १.३ मी. व्यास की दूरवीन, २०१५ में स्थापित ३.६ मी. व्यास की दूरवीन, अत्याधुनिक तकनीक पर आधारित है जो एशिया की सबसे बड़ी दूरवीन है। २०१७ से एक अन्य ४ मीटर व्यास की दूरवीन पर कार्य चल रहा है। यह जानकारी हमें अपने मित्र हूम देव से मिली। दोपहर २ बजे के पश्चात् हम सागर नगरी नैनीताल घुमने गए। वेधशाला से ७ कि.मी. की दूरी पर नैनीताल झील है। झील का मनमोहक दृश्य सैलानियों को अपनी ओर आकर्षित करता है।

बस स्टैण्ड के सामने जैसे ही झील के दर्शन होते हैं यहां की ठण्डी सुहावनी हवा आगन्तुकों

का शानदार स्वागत करती है। झील में नौका विहार की व्यवस्था है। झील के दक्षिण भाग (बस स्टेण्ड की तरफ का हिस्सा) को तल्लीताल तथा उतरी भाग को मल्लीताल कहा जाता है। तल्लीताल से बांई तरफ ठण्डी सड़क होते हुए हम झील की परिक्रमा करते हुए मन्दिर की ओर बढ़े। मल्लीताल में नैनादेवी मन्दिर, गुरुद्वारा, खेल परिसर, तिब्बती बाजार एवं एक मस्जिद् भी है। नैनीझील के नाम से ही इस जगह का नामकरण नैनीताल है। निःसंदेह नैनीताल एक खूबसूरत सैरगाह है यहां झील व आसपास का क्षेत्र मनमोहक है। खूबसूरत नजारों का आनन्द लेते हुए हम माल रोड़ से वापिस तल्लीताल आ गए। सप्ताह अन्त व छुट्टियों में यहां पर्यटकों की भारी भीड़ लगी रहती है। मल्लीताल के सामने टीम्बर ट्रेल (रज्जु मार्ग), चिड़िया घर, झील के किनारे चिनार के वृक्ष यहां के सौन्दर्य को चार चांद लगा देते हैं। मशहूर फिल्म 'पकीजा' व 'मेरा साया' में फिल्माए गए दृश्य ''चलों दिलदार चले चांद के पार चलो.....'' याद आ गए।

४ अप्रैल को टैक्सी से भवाली होते हुए सर्वप्रथम सात ताल दर्शन को गए। सात ताल से पहले जंगल के बीच गरुड़ ताल है जो दूर से देखने पर गरुड़ पक्षी के आकार की तरह है। इसके थोड़ी ही दूर सात ताल है। सात ताल एक ऐसी प्राकृतिक झील है जिसके सात किनारे हैं। सात तालों के नाम क्रमशः – १. राम ताल, २. लक्ष्मण ताल, ३. सीता ताल, ४. नल-दमयन्ति ताल, ५. गरुड़ ताल, ६. पूर्ण ताल, ७. सुखा ताल। यह विशाल सरोवर चीड़ के जंगल के मध्य स्थित बड़ा आश्चर्य जनक प्रतीत होता है कि चीड़ का पेड़ सूखी जगह पर उगता है इसके बावजूद जंगल के बीच विशालकाय जलसमूह प्रकृति का एक खूबसूरत नजारा है। विशाल झील देख कर परमात्मा की अनुपम सृष्टि का आभास सहसा होने लगता है न जाने इतना विशाल जल कहां से आया हो? ईश्वर की विशाल रचना और अपनी लघुता के अहसास में 'मैं' कहीं नजर नहीं आता। झील के किनारे हमने खूब आनन्द लिया और तत्पश्चात् हम भीम ताल व नकुचियाताल की ओर अग्रसर हो गए। भीमताल में झील के बीचों बीच एक्बेरियम हॉउस (मछली घट) बनाया गया है जहां नौका द्वारा जा सकते हैं। भीमेश्वर महादेव मन्दिर के किनारे भीम ताल एक अद्भुत झील है। कहा जाता है कि महाबली भीम ने यहां गदा का प्रहार करके पानी निकाला था। भीमताल के चारों तरफ सुन्दर बस्तियां हैं। भीमताल के पश्चात् आगे उसी मार्ग पर नौ किनारों वाला नकुचिताताल एक अन्य विशाल झील है। इसके साथ एक अन्य झील कमल ताल है। नकुचिया ताल में भी नौका विहार के अलावा सहासिक जल क्रीड़ाएं पर्यटकों के लिए आर्कषण का केन्द्र है। भीम ताल से पूर्व हनुमान गढ़ी नामक सुन्दर मन्दिर है। इसके अलावा नैनीताल में भी एक अन्य हनुमानगढ़ी मन्दिर है। इन मन्दिरों की स्थापना कुंमाऊं क्षेत्र के प्रसिद्ध सन्त नीम करौरी बाबा द्वारा की गई। इन दोनों मन्दिरों में बाबा के बड़े-बड़े चित्र भी लगाए गए हैं।

५ अप्रैल को हम पुनः टैक्सी द्वारा मुक्तेश्वर व देव स्थल दर्शन के लिए निकले। भवाली के पश्चात् घोड़ा खाल नामक स्थान पर कुमांऊ क्षेत्र का प्रसिद्ध स्थानीय गोलू देवता का मन्दिर है, इसे घण्टीयों वाला देवता भी कहा जाता है, यहां एक दो नहीं बल्कि हजारों घण्टियां, श्रद्धालुओं द्वारा चढ़ाई

गई है। ऐसा कहा जाता है कि जब किसी श्रद्धालु की मनोकामना पूरी होती है तो वह मन्दिर में एक घण्टी भेंट करता है। मन्दिर में बड़ी-छोटी घण्टियों के अंबार लगे हुए हैं। मन्दिर के साथ ही सैनिक स्कूल नैनीताल भी है। मन्दिर परिसर से भीम ताल का दृश्य बड़ा मनोरम लगता है। हम चाय बगान, रामगढ़ होते हुए शिव धाम... मुक्तेश्वर पहुंचे। नैनीताल के आस-पास चीड़ के वन है जबकि मुक्तेश्वर में देवदार व खरसु के पेड़ भी हैं। पहाड़ की चोटी पर मुक्तेश्वर महादेव मन्दिर अति मनमोहक है, यहां से चारों तरफ का खूबसूरत दृश्य दिखाई देता है एक तरफ अल्मोड़ा के दर्शन भी होते हैं। इसके पश्चात् हम एरीज संस्थान देव स्थल गए। हम सब ने दूरवीन को नजदीक से देखा वहां के शोधार्थी व वैज्ञानिक विक्रम ने हमें महत्वपूर्ण जानकारियां प्रदान की। देवस्थल से घाटी, पद्मपुर, खुटानी, भवाली होते हुए शाम तक हम वापिस नैनीताल पहुंचे।

६ अप्रैल को हमारा गन्तव्य रानीखेत व अल्मोड़ा था। मार्ग में सर्वप्रथम हम नीम करौरी बाबा के मन्दिर कैंची धाम रुके। कहा जाता है कि करौरी बाबा एक महान पहुंचे हुए सन्त एवं महापुरुष थे, जिन्होंने लोक कल्याण के अनेकों कार्य किए। १९७३ में वे ब्रह्मलीन हुए जिन्हें प्यार से लोग महाराज जी कहते थे।

यात्रा के अन्तिम दिन नैनीताल में मेरी मुलाकात चेन्नई के एक व्यक्ति से हुई, जो अपने वृद्ध माता-पिता को हरिद्वार, ऋषिकेष, कर्ण प्रयाग व खास कर कैंचीधाम यात्रा पर लाए थे। इससे करौरी बाबा की ख्याति की पुष्टि होती है। कैंची धाम में भगवान शिव, मां दुर्गा व करौरी बाबा तीनों के अलग-अलग मन्दिर हैं। मन्दिर में अभी भी बाबा का कमरा व चारपाई है जहां लोग बैठ कर ध्यान करते हैं। खड्ड के किनारे बसा कैंची धाम एक छोटा सुन्दर कस्बा है। इसके पश्चात् सेब के बगीचे तथा खैरना नामक स्थान पर नदी के बीच 'फ्राग प्वांइट' है। यहां एक चट्टान का आकार मेढ़क जैसा है। खैरना से एक सड़क दाहिनी ओर अल्मोड़ा, कोसानी की तरफ है तो बांई ओर रानीखेत मार्ग हैं। रानीखेत के लिए सर्पाकार राष्ट्रीय राजमार्ग न. १०९ खुला एवं पक्का है। यहीं नहीं नैनीताल के आसपास के क्षेत्रों मैं सड़कों की दशा अच्छी है। यहां यह बात भी उल्लेखनीय है कि कुमांऊ क्षेत्र में जहां-जहां मैंने चार दिन विचरण किया खेतीबाड़ी न के बराबर है। मैंने अपने टैक्सी ड्राइवर नूर मुहम्मद से इसका कारण जानना चाहा तो उसने वर्षा की कमी इसका सबसे बड़ा कारण बताया जबकि हिमाचल प्रदेश के सभी क्षेत्रों में खेतीबाड़ी काफी ज्यादास्तर पर की जाती है। कमांऊ क्षेत्र में पर्यटन व्यवसाय काफी फल-फूल रहा है। लोग अनाज, सब्जियों इत्यादि के लिए मैदानी क्षेत्रों पर निर्भर रहते हैं। हल्द्वानी इस क्षेत्र की महत्वपूर्ण व्यापारिक मण्डी है। रानीखेत मार्ग पर कुछ सेब के बाग भी हैं। रानीखेत एक सुरम्य पहाड़ी पर्यटन स्थल है। सर्वप्रथम हम रानीखेत में स्थित झूला देवी मन्दिर गए, यहां दुर्गा माता की प्राचीन प्रतिमा झूले पर विराजमान है, मन्दिर परिसर में अन्य मन्दिरों की तरह अनेकों घण्टियां लगाई गई हैं। इसके पश्चात् हम कुमांऊ रेजीमेंट द्वारा निर्मित मनकामेश्वर मन्दिर गए तत्पश्चात् कुमांऊ रेजीमेंट के संग्राहलय देखने गए। रानीखेत कुमांऊ तथा नागा रेजीमेंट का प्रशिक्षण

केन्द्र व मुख्यालय है। सैनिक छावनी के कारण रानीखेत का विकास व्यवस्थित तरीके से किया गया है। सेना के मुख्य प्रशिक्षण मैदान में भारत के प्रथम परमवीर चक्र विजेता मेजर सोमनाथ शर्मा का बड़ा चित्र लगाया गया है और इसे मेजर सोमनाथ ग्रांउड कहा जता है जो हिमाचल प्रदेश के नूरपुर क्षेत्र से सम्बन्धित थे। मेजर शर्मा "४ कुमांऊ" रेजीमेंट में थे। मनकामेश्वर मन्दिर में कुमांऊ रेजीमेंट की अराध्य देवी माता कालिका की प्रतीमा स्थापित की गई है। इसके पश्चात् हम गोल्फ ग्राऊंड होते हुए प्राचीन कालिका मां के मन्दिर गए। मन्दिर दर्शन के पश्चात् हिमालयन रेस्टोरेंट में हमने कुमांऊ थाली दोहपर के भोजन में ग्रहण की, जिसमें मण्डवे (कोदरा) की रोटी व देसी साग प्रमुख था। रानी खेत में सिंघाड़ा मिठाई तथा अल्मोड़ा-नैनीताल में बाल मिठाई वहां की विशेष मिठाई मानी जाती है। यकीनन रानीखेत जितना सुना था उससे कहीं ज्यादा खूबसूरत जगह है। यहां के गोल्फ ग्राऊंड को ही पालनखेत नाम दे कर आमिर खान की 'राजा हिन्दोस्तानी' फिल्म में दिखाया गया था। गोल्फ ग्राऊंड व चौवाटिया ग्राऊंड सेना के नियन्त्रण में है।

०७ अप्रैल को हम नैनीताल चिड़िया घर देखने गए। यहां प्रमुखतः बंगाल टाइगर, काला भालू, तेंदुआ, गुलदार, हिरण तथा अनेकों पक्षी हैं। चिड़िया घर से नैनीताल झील का विहंगम दृश्य मनमोहक एवं हृदयस्पर्शी लगता है। चिड़ियाघर में पर्यटकों के सुस्ताने हेतु थोड़ी-थोड़ी दूर विश्राम स्थल बने हैं। वास्तव में प्रकृति प्रेमियों, रचनाकारों व साहित्यकारों के लिए नैनीताल एक आदर्श स्थल है। चिड़ियाघर के अलावा यहां पर्यटकों के लिए १२ प्वांइट चिन्हित किए गए हैं, नैनीताल झील, चिड़ियाघर, टिम्बर ट्रेल (रज्जू मार्ग) के अलावा नैना पीक, स्नो वियू प्वांइट, टिफिन टॉप, राजभवन, इको केव गार्डन, गुरने हाऊस इत्यादि प्रमुख हैं। नैनीताल को भारत में झीलों का जिला कहा जाता है यहां नैनीताल (नैनी झील), सात ताल, गरुड़ ताल, भीम ताल, नकुचिया ताल, कमल ताल, खुर्पा ताल, माल्वा ताल, हरिश ताल, लोखम ताल, सरीपा ताल प्रमुख हैं। हम आखिर के पांच तालों का भ्रमण नहीं किया। पर्यटन की दृष्टि से सात ताल, भीम ताल, नकुचियाताल एवं नैनीताल इन में सबसे महत्वपूर्ण है।

७ अप्रैल सांय ७:५५ बजे हम काठगोदाम–देहरादून एक्सप्रैस से वापिस देहरादून के लिए रवाना हुए। देहरादून से चण्डीगढ़ ततूपश्चात आठ अप्रैल शाम तक अपनी कर्मस्थली मण्डी वापिस आ गए।

सह-प्राध्यापक- राजनीति शास्त्र विभाग,
राजकीय महाविद्यालय द्रंग, स्थित नारला
जिला मण्डी - हि.प्र.

कुल्लूत गणराज्य के नीणू गांव में देवर्षि नारद की स्थापनाएं

डॉ. ओम प्रकाश शर्मा

कुल्लूत गणराज्य के अन्तर्गत मकडाहर नामक स्थान पर पाल राजाओं की राजधानी स्थापित थी। इसी राजधानी के निकट गांव नीणू देवर्षि नारद का एक भव्य मन्दिर स्थापित है। यह मन्दिर कुल्लू मुख्यालय से 25 किलोमीटर की दूरी पर व्यास के ऊपरी छोर पर स्थित है। पूरे भारत वर्ष में यह एक मात्र ऐसा मन्दिर है, जहां देवर्षि नारद के प्रकट होने तथा मन्दिर में स्थापित होने का लोक इतिहास विद्यमान है।

नारद मुनि की प्रतिमा

पुरातात्त्विक स्थापनाएं

नीणू गांव में स्थित देवर्षि नारद का यह मन्दिर पहाड़ी शैली काष्ठकुणी में निर्मित है। छत ढलानदार है। आधार प्रस्तर निर्मित थड़ा कहलाता है। उस थड़े के ऊपर एक मंजिला मन्दिर है। गर्भगृह में एक पिण्डी स्थापित है। पूईण गांव में प्रकट हुए नारद की अष्टधातु की मूर्ति इस मन्दिर में स्थापित है। मन्दिर में लोगों के दर्शनार्थ एक सुन्दर रथ बनाया गया है। मन्दिर के निकट ही एक कोठी का निर्माण किया गया है। इस कोठी में वाद्य यन्त्र एवं साज-सज्जा की सामग्री रखी गई है। मन्दिर की छत ढलानदार है और प्रस्तरों में निर्मित है।

आध्यात्मिक स्थापनाएं

देवर्षि नारद सृष्टि की सुन्दर संरचना है। वह इस ब्रह्माण्ड में शब्द ब्रह्म रूप में स्थित ध्वनि सम्प्रेषण के दूत है। ब्रह्म के दस मानस पुत्रों में से नारद दशम पुत्र माने जाते हैं –

मरीचिरत्रयङ्गिरसौ पुलस्त्यः पुलहः क्रतु।
भृगुर्वशिष्ठो दक्षश्च दशमास्तत्र नारदः।।

देवर्षि नारद देवताओं, ऋषियों एवं ब्रह्मा, विष्णु और महेश इस त्रिदेवों के मध्य सूचना तन्त्र के माध्यम से सामंजस्य और समरसता स्थापित करने में निरन्तर प्रयत्नशील दिखाई देते हैं। नारद के सूचना तन्त्र में श्रद्धा, समरसता, आध्यात्मिकता और ब्रह्माण्डीय जीवों में संतुलन के पक्ष विद्यमान है। ऊंच-नीच का भाव महर्षि नारद चरित् में कहीं भी दृष्टिगोचर नहीं होता।

नीणू गांव में महर्षि नारद का अवतरण आध्यात्मिक है। लोक गाथा में उल्लेख आता है कि नीणू के ऊपरी भाग में स्थित पूईण गांव में एक 'चनाल' जाति की एक स्त्री खरी दोपहरी में खेत में

निड़ाई कर रही थी। उसके बालक को प्यास लगी। बालक रो रहा था। धार पर बसे इस गांव में पानी नहीं था। उसी समय स्त्री द्वारा निड़ाई में प्रयोग किए जा रहे औजार (कस्सी) में एक ठोस चीज फंस जाती है। कस्सी के साथ ही भूमि में दबी अष्टधातु की मूर्ति बाहर निकलती है और साथ ही जल की धारा भी बह निकलती है। बालक की प्यास मां बुझाती है। यहां का समाज इसे देवर्षि नारद का अवतरण मानता है। बाद में इस मूर्ति को स्थापित करने की बात आती है। देवर्षि नारद अपनी बात गुर के माध्यम से प्रकट करते हैं और मन्दिर के लिए स्थान का चयन भी स्वयं करते हैं। यह स्थान नीणू गांव का वह स्थान था, जहां पहले कभी समाज का शमशान विद्यमान था। लोगों ने गुर के आदेश पर यहां भव्य मन्दिर की स्थापना की।

नीणू गांव का श्रावण पूर्णिमा उत्सव

नीणू गांव के लोग श्रावण पूर्णिमा अर्थात् रक्षाबन्धन की पूर्व संध्या को महर्षि नारद के अवतरण उत्सव के रूप में मानते हैं। यह ''नीणू लामण उत्सव' भी कहलाता है। इस दिन कोठी से वाद्य यन्त्र एवं साज -सज्जा की सामग्री बाहर निकाली जाती है। मन्दिर के प्रागंण में बड़ा रथ सजाया जाता है और उत्सव का शुभारम्भ किया जाता है। रात्रि में सर्वप्रथम दो समूहों में बंट गायन परम्परा के जानकार लोग लामण के पांच पद गाते हैं। इन पदों में महर्षि नारद के प्रकट होने का इतिहास निबद्ध है। एक पद यहां उद्धृत किया जा रहा है –

तेरी घौण्डी पराणी म्हारै रिखिया, तेरी घौण्डी पराणी।
आगै निकला नौऊंआ नुहारी रा मोहरा, पिछै निकला जायरू पाणी।

महर्षि नारद के अवतरण के इन पांच पदों के गायन के पश्चात् पूरी रात्रि विभिन्न आख्यानों, उपाख्यानों तथा कथानकों के लामण गाए जाते हैं। श्रृंगारिक लामण भी गाए जाते हैं। सभी लोग मिलकर समरस भाव से इस उत्सव को मनाते हैं। रात्रि भर पूजा अर्चना की विधि-विधान से की जाती है। दूसरे दिन समाज देवर्षि नारद के गुर से अपनी-अपनी समस्याओं के समाधान एवं कुशल क्षेम हेतु पूछ करते हैं।

नीणू गांव का यह श्रावण पूर्णिमा उत्सव कई दृष्टिकोणों से भव्य और रोचक है। देवर्षि नारद का पूरे भारत वर्ष में यह पहला मन्दिर है। शब्दब्रह्म रूप में कभी न समाप्त होने वाली ध्वनि के पूजक देवर्षि नारद के अनुयायी इस गांव में विद्यमान है। नारद का आध्यात्मिक अवतरण यहां के समाज के आत्मिक उत्थान, नैतिक नियमों और समाज निर्माण में विशेष भूमिका अदा करता है। चनाल जाति की स्त्री के द्वारा देवर्षि नारद का प्रकट होना इस बात का संकेत है कि देवों, ऋषियों और नारद जैसे चरितों के समक्ष समस्त समाज एक है और उनका अपना समाज है। अतः नीणू गांव के देवर्षि नारद की स्थापनाएं समरस समाज के उत्थान के लिए आदर्श है।

सह आचार्य संस्कृत, राजकीय महाविद्यालय
चौड़ा मैदान, जिला - शिमला (हि.प्र.)

गतिविधियां

प्यार चन्द परमार

दो दिवसीय राष्ट्रीय इतिहास लेखन कार्यशाला

ठाकुर जगदेव स्मृति शोध संस्थान नेरी में कलियुगाब्द ५११९, विक्रमी संवत् २०७४, फाल्गुन कृष्ण २,३ (२-३ फरवरी, २०१८) में राष्ट्रीय इतिहास लेखन पर दो दिवसीय कार्यशाला का आयोजन किया गया। कार्यशाला के उद्घाटन सत्र के मुख्य अतिथि हिमाचल प्रदेश के माननीय शिक्षा मन्त्री श्री सुरेश भारद्वाज तथा मुख्य वक्ता के रूप में केन्द्रीय विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. कुलदीप चन्द अग्निहोत्री उपस्थित रहे। कार्यशाला का उद्घाटन मुख्यातिथि ने दीप प्रज्जवलन से किया। सर्वप्रथम डॉ. ओम प्रकाश ने नेरी शोध संस्थान का मूल लक्ष्य प्रस्तुत किया। उन्होंने विद्वानों के सम्मुख भारत के १९७ करोड़ वर्षों के इतिहास के महत्व को रखा और बताया कि नेरी शोध संस्थान १९७ करोड़ वर्ष की ऐतिहासिक परम्परा के उपस्थापन हेतु कार्य कर रहा है व इसको सरल रीति से समझाने का प्रयास कर रहा है।

डॉ. कुलदीप चन्द अग्निहोत्री, कुलपति केन्द्रीय विश्वविद्यालय ने अपने उद्बोधन में शैक्षणिक संस्थानों में पढ़ाने जाने वाले इतिहास को एकाङ्गी इतिहास बताया तथा कहा कि इसका उल्लेख स्वर्गीय ठाकुर रामसिंह करते रहे हैं। उन्होंने उल्लेख किया कि भारत की कालगणना विराट व अति प्राचीन है क्योंकि आज भी भारत के गांव-गांव में कर्मकाण्ड करवाने वाले ब्राह्मण संकल्प पाठ उच्चारण से जम्बू द्वीप और वर्तमान के श्वेतवाराह कल्प के वैवस्वत् मनवन्तर के २८वें कलियुग के ५११९ वर्ष तक का वर्णन करते हुए भारत के १९७ करोड़ वर्ष के इतिहास का ही उल्लेख करते हैं। उन्होंने भारतीय तथा यूरोपीय इतिहास के मूल अन्तर का वर्णन करते हुए कहा कि भारत में विचार का इतिहास है तथा यूरोपीय इतिहास व्यक्तियों का इतिहास लिखा गया है। अतः आज के समय में भारतीय इतिहास को पुनर्स्थापित करने की आवश्यकता है। मुख्यातिथि एवं हिमाचल प्रदेश के शिक्षा मन्त्री ने सभी विद्वानों को उद्बोधित करते हुए कहा है कि हिमाचल का उल्लेख ग्रन्थों में आया है यह हिमाचल की ऐतिहासिकता का ही प्रमाण है। संस्थान के समन्वय प्रमुख श्री चेतराम गर्ग ने बताया कि आज भारत का युवा अपना सही इतिहास जानने का इच्छुक है इसके लिए शोध संस्थान नेरी योग्य विद्वानों की टोली के माध्यम से मौलिक शोध कार्य में लगा हुआ है। दो दिनों तक कार्यक्रम के आगे के सत्रों में कार्यशाला में उपस्थित हुए विद्वानों, जिनमें प्रमुख रूप से डॉ. सूरत ठाकर, डा. राघवेन्द्र यादव, डॉ. भाग चन्द चौहान, डॉ. सुरेश सोनी, डॉ. शिव दयाल, डा. सुज्ञान कुमार मोहन्ती, डॉ. रोशनी, डॉ. कृष्ण मोहन पाण्डेय, डॉ. ओम दत सरोच, डॉ. विवेक शर्मा, डॉ. एस.के. बंसल, डा. राकेश कुमार, डा.

मनोज कुमार शर्मा, डॉ. रमेश चन्द शर्मा, श्री भूमिदत शर्मा, श्री दीपराम गर्ग, श्री दीपक कुमार तथा कला, संस्कृति एवं भाषा विभाग के डॉ. कर्म सिंह ने विभिन्न शोध विषयों पर अपने-अपने शोध पत्र प्रस्तुत किए तथा स्वरुचि अनुसार शोधपरक विषयों का चयन किया।

डॉ. राघवेन्द्र यादव ने पाठ्य पुस्तकों में वर्णित इतिहास को असत्य व निर्देशित इतिहास कहा। डॉ. ओम दत्त सरोच ने वैदिक काल के ''त्रिगर्त'' क्षेत्र पर कार्य करने की आवश्यकता जताई। डॉ. विवेक शर्मा ने कांगड़ा क्षेत्र की लोक रामायण 'रड्ड' के सरंक्षण की आवश्यकता पर बल दिया। डॉ. राकेश कुमार शर्मा जो जनरल जोरावर सिंह विषय पर शोध कर रहे है, ने जोरावर सिंह के जीवन वृत पर पुस्तक प्रकाशित करने का संकल्प लिया। डॉ. रोशनी ने 'नाग परम्परा' तथा स्थानीय देवी-देवताओं पर शोध करने का संकल्प लिया।

डॉ. मनोज कुमार शर्मा ने Accounting System, स्टाक मार्किट, प्राचीन भारत की व्यापार प्रणाली पर शोध पत्र प्रस्तुत किया। डॉ. कर्म सिंह ने हिमाचल प्रदेश के लोक साहित्य पर डॉ. बंशीराम, श्री मौलू राम ठाकुर तथा श्री हरिराम जास्टा द्वारा किए कार्यों पर प्रकाश डाला। श्री दीपक कुमार ने लोक मेलों, पर्वों व त्यौहारों की चर्चा करते हुए निरमण्ड क्षेत्र के नीरशु, ठीरशु तथा बूढ़ी दिवाली को उपस्थापित किया। श्री दीपराम गर्ग ने शिमला जिला में प्रचलित लोक रामायण को लेखन बद्ध करने का संकल्प किया।

ठाकुर रामसिंह जी का १०३वां जयन्ती समारोह

नेरी शोध संस्थान के संस्थापक वीरव्रती इतिहास पुरुष ठाकुर रामसिंह का १०३वां राज्य स्तरीय जयन्ती समारोह, हिमाचल प्रदेश कला, भाषा एवं संस्कृति एकादमी तथा ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान नेरी के संयुक्त तत्वाधान में कलियुगाब्द ५११९, विक्रमी संवत् २०७४, फाल्गुन प्रविष्टे ४-५ तदानुसार १५-१६ फरवरी, २०१८ को नेरी शोध संस्थान में मनाया गया। १५ फरवरी को प्रातः ठाकुर जी के जन्मदिवस के उपलक्ष्य में हवन यज्ञ किया गया। १५ फरवरी के प्रथम सत्र के मुख्यातिथि हिमाल प्रदेश के पूर्व मुख्यमन्त्री प्रो. प्रेम कुमार धूमल रहे। सत्र का प्रारम्भ इतिहास पुरुष के वाचन से हुआ। मुख्यातिथि ने अपने उद्बोधन में ठाकुर रामसिंह को प्रख्यात इतिहासविद् तथा पारम्परिक लोक संस्कृति का विद्वान बताया जिन्होंने भारतीय इतिहास को वास्तविक घटनाओं के आधार पर लिखे जाने के लिए जन जागरण अभियान चलाकर प्रदेश देश के अनेक विद्वानों को इतिहास लेखन के लिए प्रेरित किया।

इस अवसर पर डॉ. रमेश चन्द शर्मा ने ठाकुर रामसिंह कृतित्व एवं व्यक्तित्व पर शोधपत्र वाचन करते हुए बताया ठाकुर रामसिंह के व्यक्त्वि को समझने के लिए, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक जीवन को आत्मसात् करना आवश्यक है और कहा कि ठाकुर जी का जीवन उसी ऋषि तुल्य जीवन की पराकाष्ठा है। नेरी शोध संस्थान के मार्गदर्शक एवं समन्वय प्रमुख चेतराम गर्ग ने संस्थान की वर्तमान गतिविधियों व भविष्य की योजनाओं की चर्चा करते हुए बताया कि शोध संस्थान में एक

पुस्तकालय की स्थापना की गई है तथा भविष्य में शोधार्थियों के लिए छात्रवृत्ति व उनको आवासीय व्यवस्था उपलब्ध करवाने हेतु प्रयास किए जा रहे हैं।

कार्यक्रम के दूसरे सत्र में प्रदेश से आए विद्वानों, जिनमें प्रमुख रूप से डॉ. ओम प्रकाश शर्मा, डॉ. रमेश शर्मा, डॉ. अंकुश भारद्वाज, डॉ. ओम दत सरोच, डा. सूहणू राम शर्मा, श्री भूमिदत शर्मा तथा श्री दीपराम गर्ग उपस्थित थे, ने परिचर्चा में भाग लिया। चायकाल उपरान्त तृतीय सत्र में हिमाचल प्रदेश भाषा, कला एवं संस्कृति विभाग के संयुक्त निदेशक राकेश कोरला की अध्यक्षता में एक कवि सम्मेलन आयोजित किया। जिसमें मजलसी राम वैरागी, राजेन्द्र, राजन, अशोक, शैली किरण, संदीप शर्मा, ऋषि राम भारद्वाज, शमशेर सिंह तथा चिरान्द आदि कवियों ने भाग लिया।

कार्यक्रम के दूसरे दिन १६ फरवरी, २०१८ (शुक्रवार) को राज्य स्तरीय ठाकुर रामसिंह जयन्ती के मुख्यातिथि प्रदेश के माननीय मुख्यमन्त्री श्री जयराम ठाकुर रहे तथा उनके साथ प्रदेश के पंचायती राज मन्त्री वीरेन्द्र कंवर, बहुद्देशीय परियोजना मन्त्री अनिल शर्मा, कला, भाषा एवं संस्कृति विभाग की सचिव पूर्णिमा चौहान, नेरी शोध संस्थान के अध्यक्ष विजय मोहन कुमार पुरी, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रान्त कार्यवाह किस्मत कुमार मंचासीन थे। इसके अतिरिक्त लेखक गण, कवि वृन्द तथा शोध संस्थान के अनेकों कार्यकर्ता भी कार्यक्रम के भागीदार बने। कार्यक्रम के प्रारंभ में मुख्यातिथि ने ठाकुर राम सिंह को पुष्पाजंलि अर्पित की। इस अवसर पर डॉ. ओम प्रकाश शर्मा ने ठाकुर रामसिंह पर शोध पत्र प्रस्तुत किया। अपने प्रबोधन में मुख्यातिथि जयराम ठाकुर ने ठाकुर रामसिंह के व्यक्तित्व की चर्चा करते हुए कहा ठाकुर रामसिंह अपने ध्येय निष्ठ एवं कर्मठ व्यक्तित्व के कारण इतिहास बनाते-बनाते स्वयं इतिहास बन गए। उन्होंने घोषणा की भारतीय इतिहास के लिए ठाकुर रामसिंह के योगदान के कारण राज्य सरकार उनकी जयन्ती को प्रतिवर्ष मनाया करेगी तथा उनके कृतित्व पर एक पुस्तक भी निकाली जाएगी। मुख्यातिथि उद्‌बोधनोपरान्त इस दो दिवसीय जयन्ती कार्यक्रम का समारोप हुआ।

भारतीय नव वर्ष अभिनन्दन – कलियुगाब्द ५१२०, विक्रमी संवत् २०७५,

इस वर्ष भारतीय नववर्ष का कार्यक्रम ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान नेरी, हिमाचल कला, संस्कृति एवं भाषा अकादमी तथा संस्कार भारती हिमाचल प्रदेश के संयुक्त तत्वावधान में चैत्र शुक्ल प्रतिपदा, विक्रमी संवत् २०७५ (रविवार) तदानुसार १८ मार्च, २०१८ को गेयटी थियेटर, शिमला में आयोजित किया गया। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि हिमाचल प्रदेश के महामहिम राज्यपाल आचार्य देवव्रत जी रहे। कार्यक्रम के विशिष्ट अतिथि हिमाचल प्रदेश के माननीय मुख्यमन्त्री श्री जयराम ठाकुर तथा मुख्यवक्ता प्रान्त प्रचारक माननीय संजीवन जी थे। समारोह के अध्यक्ष हिमाचल प्रदेश के माननीय शिक्षा मन्त्री श्रीमान् सुरेश भारद्वाज विराजमान थे।

कार्यक्रम का शुभारंभ भारतीय सभ्यता, संस्कृति और इतिहास के मूलभूत सिद्धान्तों पर चर्चा

से हुआ। इस अवसर पर समारोह के मुख्य अतिथि हिमाचल प्रदेश के महामहिम राज्यपाल आचार्य देवव्रत जी ने भारतीय संवत्सर परम्परा व सृष्टि की प्रकृति के महत्त्वपूर्ण पक्षों को वैज्ञानिक प्रमाणों के आधार पर प्रस्तुत किया। हिमाचल प्रदेश कला, संस्कृति एवं भाषा अकादमी की ओर से भारतीय कालगणना और भारत की नवसंवत्सर परम्परा विषय पर ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान के वैचारिक पक्ष प्रमुख डॉ. ओम प्रकाश शर्मा व संस्कृत विद्यापीठ डोहगी, ऊना में कार्यरत आचार्य कृष्ण मोहन पाण्डेय ने शोध पत्र प्रस्तुत किए।

कार्यक्रम के मुख्यवक्ता प्रान्त प्रचारक श्रीमान् संजीवन जी ने भारत के गौरवशाली इतिहास को जन-जन तक पहुंचाने के लिए ऐसे आयोजनों की आवश्यकता पर बल दिया। इस अवसर पर ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान से प्रकाशित ''इतिहास दिवाकर'' का 'ठाकुर विद्याचन्द' विशेषांक का लोकार्पण किया गया। नेरी शोध संस्थान के निदेशक एवं समन्वय प्रमुख श्रीमान् चेतराम गर्ग ने नेरी शोध संस्थान की शोध परक गतिविधियों पर प्रकाश डालते हुए कहा कि स्व. विद्याचन्द ठाकुर ''इतिहास दिवाकर'' के सम्पादक व वैचारिक पक्ष के प्रमुख रहते हुए शोध संस्थान के शोधपरक वातावरण निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

इस अवसर पर डॉ. सूरत ठाकुर द्वारा लिखित व अनुराग पराशर द्वारा निर्देशित डॉ. विद्याचन्द पर बनाई कुल्लुवी गीतों की एक एलबम का भी लोकार्पण किया गया। इस अवसर पर एक विशाल रंगोली आयोजन के साथ विक्रमी संवत् २०७५, के अभिनन्दन हेतु २०७५ दीपों का प्रज्ज्वलन किया था प्रदेश में नववर्ष पर गाया जाने वाला 'ढोलरू' गायन भी किया गया। इस वर्ष पूरे प्रदेश में भगवा पताकाएं, तोर्ण द्वारों से प्रदेश के छोटे-छोटे कसबों को भी सजाया गया था। भारतीय कालगणना, वैज्ञानिक कालगणना का वृत की प्रस्तुती के उपरान्त कार्यक्रम का समारोप हुआ।

त्रैमासिक शोध वाचन शृंखला – विश्वविद्यालय शिमला (२२ मई, २०१८)

ठाकुर जगदेव चन्द स्मृति शोध संस्थान नेरी द्वारा संचालित त्रैमासिक शोध पत्र वाचन शृंखला के अन्तर्गत हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय के इक्डोल में कार्यरत राजनीतिक विभाग के सह आचार्य डॉ. जोगेन्द्र सकलानी ने वर्तमान संदर्भ में राष्ट्रीयता विषय पर शोध पत्र प्रस्तुत किया। डॉ. संकलानी ने इस दौरान वर्तमान समय में राष्ट्रवाद व देशभक्ति को लेकर चल रही चर्चाओं पर अपने विचार रखे। इक्डोल के निदेशक प्रो. पी.के. वैद्य ने कार्यक्रम की अध्यक्षता की। शोध संस्थान के लेखक प्रमुख व निदेशक समन्वय प्रमुख चेतराम, डॉ. ओम प्रकाश शर्मा, डॉ. बीर.आर. ठाकुर भी इस मौके पर उपस्थित थे।

श्रीमद्भागवत् पुराण अनुशीलन सत्र (३ जून, २०१८)

पुराणानुसंधान योजना के अन्तर्गत श्रीमद्भागवत पुराण अनुशीलन गोष्ठी के अन्तर्गत डॉ. ओमदत्त सरोच ने भारतीय पुराण परम्परा पर प्रकाश डालते हुए श्रीमद्भागवत पुराण के ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, दार्शनिक और धार्मिक पक्षों की व्याख्या की। शोध संस्थान में नियमित चलने

वाली व्याख्यान माला का यह भागवत पुराण पर प्रथम सत्र था। डॉ. सरोच ने पुराणों के महत्व, लक्षण, संख्या, उपपुराण पर विस्तृत जानकारी दी। उन्होंने बताया कि श्रीमद्भागवत पुराण के महातम्य के प्रथम छः अध्याय पद्मपुराण से लिए गए हैं। इस पुराण के मुख्यवक्ता शुकदेव जी और श्रोता शौनक जी है। प्रारम्भ के छः अध्यायों में राजा परीक्षित की कथा, नारद द्वारा भक्ति, ज्ञान और वैराग्य की स्थिति का वर्णन कलियुग के प्रभाव तथा धूंधुकारी को कष्ट से मुक्त करवाने के लिए गोकर्ण का भागवत पारायण करना आदि पक्षों का वर्णन किया।

गोष्ठी में पधारे विद्वानों ने डॉ. सरोच से प्रतिपादित विषयों पर अपने प्रश्न रखे जिसमें भागवत में वर्णित काल, प्रमाणिकता तथा इन कथाओं की वर्तमान समय में उपदेयता पर जिज्ञासा समाधान किया। इस गोष्ठी में संस्थान के कोषाध्यक्ष श्री नरेन्द्र कुमार नन्दा, डॉ. राकेश शर्मा, डॉ. विकास शर्मा, डॉ. जे.पी. शर्मा, श्री संजीव कुमार, श्री आशीष शर्मा, श्री अनिल शर्मा सहित लगभग २५ विद्वानों ने भाग लिया।

STATE MISSION ON FOOD PROCESSING (SMFP)

The Ministry of Food Processing. Government of India Had delined the National Mission on Food Processing scheme from the Central assistance w.e.f 2015-16 and onwards . The state \Government has decided to continue this scheme as state mission on food processing (SMFP) from Aug. 2015 with the objective to facilitate food processing industries in the state. The six scheme being implemented under SMFP and their pattern of assistance are as under -

Sr. No.	Scheme	Grant-in-aid	Maximum limit of Grant-in-aid	Eligible Sector
1	Technology Up-gradation/ Extablishment / Mondernization of FPIs (Cost of Plant & Machinery & Technical civial works)	33.33%	Max. Rs. 75 Lakhs	Food Processing sector like fruits & vegetables. Milk/meat/poultry/fish products., Cereal/other consumer food Product rice/flour/pulse/ oul milling and such other agri/hort/sector including food flavours. oleoresins, spices, coconut, mushrooms, wines and hops

2	Cold Chain for Non-horticulture Products	50%	Mix. Rs 5.00 crore , interest subvention @ 7% per year subject to max of Rs. 25.00 lakh per year for 7 years	Following sector may be covered under the scheme : **A.** Dairy-All milk and milk products, etc. **B.** Meat- All meat and meat Products, etc. **C.** Aquaculture and marine products like prawns, seafood, Fist, and their Processed products etc. **D.** Any other Non-horticultural food products requiring integrated cold chain.
3	Promotional Activities - a. Organizing seminar/ workshops b. Conducting studies/ surveys c. Support to exhibitions/ fairs d. Advertisement & Publicity	50% 50%	max. Rs. 4 lakhs max Rs. 4 laks Quantum of assistance will depend on merits of the proposal	Government/Autonomous/statutory bodies /Academic Institutions/ Bodies, Cooperative Societies. Industry Associations, Private Bodies, SHGs, NGOs etc. are eligible to seek assistance for organizing conference/ seminars/ workshops etc. The event must benefit the food processing sector in the state.
4	Scheme for Creating Primary processing centers /collection centers in Rural Areas	75%	Max. Rs. 2.50 cr.	Scheme is applicable to both horticulture and non-hotriculture produce such as fruits, vegetables, grains & pulses, dairy products, meat, poultry and fish etc.
5	Modernization of Meat shops	753%	max Rs. 5.0 Lakhs	All implementing agencies/ organizations such as government/PSUs/ Joint Ventures/ NGOs/ cooperative/ SHGs/ private sector/ individuals engaged in the operations of meat shops would be eligible for financial assistance under the scheme.
6	Reefer Vehicles	50%	Max Rs. 50 lakhs	1. The assistance will be available to the individual entrepreneurs. partnership firms, registered societies, co-operatives, NGOs, SHGs, Companies and Corporations etc. 2. The applicant/ beneficiary should have sound financial back ground and the projects necessarily be supported by bank fls by way of term loan.

For the year 2017-18 two meetings of SLEC has been held under the Chairmanship of ACS (Ind.)/ Pr. Secretary (Ind.) to the govt. of HP. SLEC approved 37 applications/ proposals under different schemes of SMFP and sanctioned GIA amountiny Rs. 573.68 lakh. Mission Directorate released an amount of Rs. 132.68 lakh, as first installment in favour of the projects who completed codal formalities as per SMFP guidelines.